हिन्दी काव्य-प्रबंध—माला-पुस्तक दूसरी ।

॥ श्री ॥

हिन्दी-काव्यालङ्कार

जिसमें समस्त अलंकारो के लक्षण और उदाहरण अत्यन्त सुगम रीति से वर्णित हैं तथा न्याय और निज निर्म्मित **अलङ्कार दर्पण** भी सम्मिलित है ।

—रचयिता—

साहित्याचार्य्य बाबू जगन्नाथप्रसाद भानु-कवि,

रिटायर्ड ई. ए. सी. बिलासपुर, मध्यप्रदेश ।

जगन्नाथ प्रेस बिलासपुर में मुद्रित ।

सन् १९१८ ई०

प्रथम बार

PRINTED BY S ABDULLA MANAGER AT THE
"JAGANNATH PRESS"—BILASPUR, C. P.
AND
PUBLISHED BY MR. B. JAGANNATH PRASAD
PROPRIETOR.

भूमिका।

हिन्दी-काव्य-प्रबन्ध-माला की यह दूसरी पुस्तक "हिन्दी-काव्यालंकार अपने प्रिय पाठको की सेवा में हम सादर समर्पण करते हैं। हिंदी-काव्य का रसास्वादन करने के लिये अलंकारो का जानना परमावश्यक है। मेरे पूर्व रचित ग्रंथ 'काव्य प्रभाकर' में भी इसकी सविस्तर व्याख्या है परन्तु उसका मूल्य अधिक होने के कारण वह सर्वसाधारण को दुष्प्राप्य सा है। इसलिये यह छोटीसी पुस्तक सर्वसाधारण के हेतु निर्मित की गई है। इसमें संदेह नहीं कि हिन्दी-साहित्य में इस विषय के अनेक ग्रंथ विद्यमान हैं परन्तु किसी में लक्षण और उदाहरण पृथक्२ छंदों में कहे हैं और किसी में लक्षण केवल गद्य मेंही कहकर उदाहरण छंदो में कहे हैं जिनके याद करने में विद्यार्थियों को अत्यन्त कठिनाई होती है। भाषा भूषण में लक्षण और उदाहरण संक्षिप्त रीति से एक एकही दोहे में पाये जाते हैं परन्तु उनकी व्याख्या नहीं अतएव विद्यार्थियों को वे सुगम बोध नहीं है। इस पुस्तक में विशेषता यह है कि लक्षण और उदाहरण एकही दोहे में कहे गये हैं और उसी के नीचे आवश्यकीय व्याख्या भी सरल गद्य में लिखी गई है। इसके अतिरिक्त रामायणादि सद्ग्रंथों से अलंकारों के अनेक उदाहरण दे दिये गये हैं जिससे विषय शीघ्र हृदयंगम हो जाय। दोष तथा मतभेद भी यथास्थान लिखे गये है। अलंकारो में न्याय का भी काम पड़ता है सो उसकी भी व्याख्या की गई है। अंत में निज निर्म्मित अलंकार दर्पण भी सम्मिलित कर दिया गया है, जिससे विद्यार्थियों को एक अलंकार से दूसरे मे क्या भेद है, शीघ्रही ज्ञात हो जावे। आशा है इससे विद्यार्थियों और साहित्य परीक्षार्थियों को विशेष सुविधा होगी। इस ग्रंथ के रचने में संस्कृत ग्रंथ साहित्य दर्पण, काव्यालंकार, काव्यप्रकाश, कुवलयानन्द, रस-

गंगाधर तथा भाषा-ग्रंथ अलंकार प्रकाश, अलंकार मंजूषा, रामचंद्रभूषण, जसवंतभूषण और भाषाभूषण से बहुत कुछ सहायता ली गई है अतः हम इनके लेखकों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रदर्शित करते हैं। संस्कृत के तो प्रायः सभी ग्रंथ उत्तम हैं पर भाषा में अलंकार प्रकाश और अलंकार मंजूषा ऊंचे दरजे के ग्रन्थ हैं। अस्तु इस पुस्तक से पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने को कृतकृत्य समझूंगा।

बिलासपुर, मध्यप्रदेश
१९१८

जगन्नाथ प्रसाद,
भानु-कवि।

हिन्दी-काव्यालङ्कार का सूचीपत्र ।

हिन्दी-काव्यालङ्कार

(Figure of Speech)

१. काव्य जिसमे अलंकृत होता है उसे काव्यालङ्कार कहते हैं, काव्य दो प्रकार का है (१) गद्य (छंदरहित वाक्य) (२) पद्य (छंद निबद्ध) जिसमें गद्य वा पद्य दोनों हों उसको चंपू कहते हैं, यथा—

छंद निबद्ध सुपद्य कहि, गद्य होत बिन छंद ।
चंपू गद्यऽरुपद्य मय, भानु भनत सानंद ॥

२. काव्य के दो भेद और हैं (१) दृश्य, जो देखने योग्य हो यथा नाटकादि (२) श्रव्य जो सुनने वा पढ़ने के योग्य हो अर्थात् लिपि बद्ध यथा रामायणादि ।

३. काव्यान्तर्गत चमत्कार को अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार का धर्म्म है-काव्य की शोभा बढ़ाना ।

४. अलङ्कार तीन प्रकार के होते हैं :—

१ शब्दालंकार, जहां शब्द रचना के द्वारा चमत्कार भासित हो । यथा, रघुनंद आनँद कंद कौशल चंद दशरथ नंदनम् ।

२ अर्थालंकार, जहां अर्थ में चमत्कार पाया जावे । यथा, अलि से मावस रैन से, बाला तेरे बार ।

३ उभयालंकार, जहां एक से अधिक अलंकार हों चाहे फिर वे शब्द के हों या अर्थ के या दोनों के, यथा—

लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुनंद ।
ज्ञान सभा जनु तनु धरे, भक्ति सच्चिदानंद ॥

सू०—अलंकार का विषय कहीं२ सूक्ष्म और वादग्रस्त है अतएव विद्यार्थियों को चाहिये कि यथा संभव परस्पर वादानुवाद द्वारा इसका अभ्यास सिद्ध करें ।

शब्दालङ्कार

(A figure of Speech in words)

शब्दालंकार के आठ भेद हैं, १ पुनरुक्तवदाभास, २ अनुप्रास, ३ यमक, ४ वक्रोक्ति, ५ भाषासमक, ६ श्लेष, ७ प्रहेलिका और ८ चित्र ।

१ पुनरुक्तवदाभास (पुनःउक्तवत् आभास)

पुनरुक्ती वद भास, शब्द भिन्न एकार्थ जहं ।
अर्थ जुदो परकास, भंग अभंगहिं रूपतें ॥ यथा—

सह सारथि सूत सुलसत, तुरंग आदि पद सैन ।
निकट तुम्हारे रहत नृप, सुमनस विबुध सुबैन ॥

यहां प्रथमार्द्ध में सारथि और सूत ये दोनों भिन्न२ होने पर भी एकार्थवाची हैं परंतु पद भंग करने से अर्थ जुदा हो जाता है जैसे हे नृप सहसा (बलपूर्व्वक) रथि (योद्धागण) सूत (सारथी) तुरंग (घोड़ा) और पैदल फ़ौज आदि से आप शोभायमान हैं । द्वितीयार्द्ध में अभंग पद सुमनस और विबुध भी एकार्थवाची हैं पर अर्थ जुदा है अर्थात् मंत्री और पंडित ।

२ अनुप्रास

(Alliteration)

(वर्ण साम्य मनुप्रासो, वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्)

व्यंजन सम बरु स्वर असम, अनुप्रास लंकार ।
छेक, वृत्ति, श्रुति, लाट अरु, अंत्य पांच विस्तार ॥

जहां व्यंजन की समानता हो, स्वर मिलैं वा न मिलैं वही अनुप्रास है। अनुप्रास में स्वरों की गणना नहीं कीजाती।

१ छेक-अनुप्रास

(Single Alliteration)

जहँ अनेक व्यंजनन की, आवृत्ति एकै बार।
सो छेकानुप्रास ज्यों, अमल कमल कर धार ॥

छेक का अर्थ चतुर है-छेको व्यंजन सङ्घस्य सकृत् साम्य मनेकधा । जहां अनेक व्यंजनों की केवल एक बार क्रमपूर्व्वक आवृत्ति हो उसको छेकानुप्रास कहते हैं। यहां कर धार में 'र' की और अमल कमल में 'मल' की एकही बार क्रमपूर्व्वक आवृत्ति है यदि एक स्थान में 'मल' हो और दूसरे स्थान में 'लम' हो तो क्रमपूर्व्वक नहीं समझना चाहिये जैसे 'रस' की आवृत्ति 'रस' न कि 'सर'। यथा—

(१) राधा के बर बैन सुनि, चीनी चकित सुभाय ।
दाखदुखी मिसरी मुरी, सुधा रही सकुचाय ॥

यहां बर और बैन में 'ब' की, चीनी और चकित में 'च' की, सुधा और सकुचाय में 'स' की एक एक बार आवृत्ति

है वैसेही दाख दुखी में 'द' और 'ख' की और मिसरी और मुरी में 'म' और 'र' की एक एक बार ही आवृत्ति है ।

(२) शुभ शोभा सोहै सही, वारी वर चल चाल ।
यहां शकार, भकार, सकार, हकार, वकार, रकार, चकार और ल कार का एक एक बार ही सादृश्य है ।

(३) बांधे द्वार काकरी चतुर चित काकरी सो उमिर वृथा करी न राम की कथा करी ।
यहां वृथा और कथा में 'थ' की, चतुर और चित में 'च' और 'त' की, करी करी में दोनों वर्णों की और काकरी-काकरी में तीनों वर्णों की आवृत्ति एक एक बार ही है ।

(४) भंजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा (प और ब)

(५) छेम करी कह छेम बिसेखी (छेम, छेम, क, क)

(६) अति गह गहे बाजने बाजे (ग, ह, ब, ज)

२ वृत्ति-अनुप्रास
(Harmonious Alliteration)

व्यंजन इक वा अधिक की, आवृत्ति कैयो बार ।
सो वृत्यानुप्रास जो, परै वृत्ति अनुसार ॥

वृत्तिगत अनेक व्यंजनों का अथवा एक व्यंजन का कई बार सादृश्य हो उसको वृत्त्यनुप्रास कहते हैं इसमें क्रमाक्रम के विचार की आवश्यक्ता नहीं, यथा—

(१) कहि जय जय जय रघुकुल केतू ।
(२) सत्य सनेह सील सुख सागर ॥

वृत्ति के तीन भेद हैं (१) उपनागरिका (२) कोमला (३) परुषा।

१ उपनागरिका—जिसमें मधुर वर्ण तथा सानुनासिक की बाहुल्यता हो, परन्तु ट ठ ड ढ ष नहीं यथा-रघुनंद आनँद कंद कौशलचंद दशरथ नंदनम्। गुण-माधुर्य्य। अनुकूलरस-शृंगार, हास्य, करुणा और शांत।

२ कोमला—जिसमें प्रायः उपनागरिका के ही वर्ण हों, परंतु योजना सरल हो, सानुनासिक और संयुक्त वर्ण कम हों और अल्प समास वाले वा समास रहित ऐसे शब्द हों जो पढ़ते या सुनतेही समझ में आजावें यथा—सत्य सनेह सील सुखसागर। गुण-प्रसाद। अनुकूलरस-सब रस।

३ परुषा—जिसमें कठोर वर्ण ट ठ ड ढ ष, द्वित्त वर्ण, रेफ, दीर्घ समास तथा संयुक्त वर्णों का बाहुल्य हो जैसे-वक्र वक्र करि पुच्छ करि रुष्ट ऋच्छ कपि गुच्छ। गुण—ओज। अनुकूलरस—वीर, वीभत्स, भय, अद्भुत और रौद्र।

उपनागरिका और कोमला की रीति को वैदर्भी, और परुषा की रीति को गौड़ी कहते हैं, वैदर्भी और गौड़ी के मिश्रण को पांचाली रीति कहते हैं यदि पांचाली में गूढ़ता कुछ कम हुई तो वह लाटी रीति कहाती है, यथा—.

वैदर्भी सुंदर सरल, गौड़ी गुंठित गूढ़।
पांचाली जानौ जहां रचना गूढ़ अगूढ़॥

प्राचीन भाषा काव्य में मृदुता के हेतु 'श' के स्थान में 'स', 'ष' के स्थान में 'ख' वा 'स', 'ण' के स्थान में 'न' तथा 'क्ष' के स्थान में 'च्छ' का प्रयोग पाया जाता है। टकार भी उपनागरिका तथा कोमला में कहीं२ प्रयुक्त होता है, एकाध वर्जित वर्ण वा संयुक्त वर्ण के आजाने से इन रीतियों में भेद नहीं पड़ता न कर्णमाधुर्य्यही में बाधा पड़ती है। ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि उपनागरिका तथा कोमला में कठोर वा संयुक्त वर्णों का बाहुल्य न हो। समास संक्षिप्त को कहते हैं समास के उलटे को व्यास अर्थात् विस्तृत कहते हैं यथा—कह्यों नाथ हरि चरित अनूपा, व्यास समास स्वमति अनुरूपा। जैसे राजपुत्र यह समास पद हुआ और राजा का पुत्र यह व्यास पद हुआ।

संस्कृत के नाटक प्रकरण में चार वृत्तियां मानी हैं यथा-शृंगार और हास्य में कैशिकी वा कौशिकी, बीर रस में सात्वती, भय और अद्भुत में आरभटी और शेष रसों में भारती। नाटक ग्रंथों में इनके अनेक भेदोपभेद कहे हैं।

३ श्रुति-अनुप्रास
(Melodious Alliteration)

वर्ण तालु कंठादि की, समता श्रुतिहि प्रमान। यथा—

जयति द्वारिका धीश, जय संतन संतापहर।

यहां तालुस्थानी जकार यकार तथा दंतस्थानी सकार नकार और तकार का प्रयोग है वर्ण से अभिप्राय व्यंजन का है। नीचे वर्णों के उच्चारण स्थान लिखे हैं :—

वर्ण			उच्चारण स्थान
अ आ क ख ग घ ङ और विसर्ग (:)...			कंठ Gutturals
इ ई च छ ज झ ञ य श...		...	तालु Palatals
ऋ ॠ ट ठ ड ढ ण र ष ...		...	मूर्द्धा Linguals
लृ त थ द ध न ल स	...	...	दंत Dentals
उ ऊ प फ ब भ म	...	...	होंठ Labials
ए ऐ ...	...	...	कंठ तालु
ओ औ ...	...	...	कंठ ओष्ठ (होंठ)
व ...	...	...	दांत होंट
ङ ञ ण न म	...	...	नासिका सेभी Nasal
अनुस्वार ...	...	...	नासिका

४ लाट-अनुप्रास

Repetition in the same sense, but in a different application.

लाट पदावृत्ति जानिये, तात्पर्य महँ भेद ।

यथा-पीय निकट जाके नहीं घाम चांदनी ताहि ।
पीय निकट जाके नहीं घाम चांदनी ताहि ॥

इसमें केवल अन्वय करने से अर्थ में भेद हो जाता है "नहीं" शब्द एक ओर लगाओ तो एक अर्थ, दूसरी ओर लगावो तो दूसरा अर्थ होता है ।

५ अन्त्य-अनुप्रास (तुकांत)

(Final alliteration)

पद के अन्तहिं वर्ण जो, सो तुकांत हिय जान ।

इसके छै भेद पाये जाते हैं । जानना चाहिये कि छंद के पहिले और तीसरे चरण को विषम चरण और दूसरे और चौथे को समचरण कहते हैं ।

नाम	उदाहरण
१ सर्वान्त्य—	न ललचहु, सब तजहु, हरि भजहु यम करहु ।
२ समान्त्य-विषमान्त्य	जिहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवर वदन । करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभगुण सदन ।
३ समान्त्य—	सब तो । शरणा । गिरिजा । रमणा ।
४ विषमान्त्य-	लोभिहिं प्रिय जिमि दाम, कामिहिं नारि पियारि जिमि तुलसी के मन राम, ऐसे हो कब लागिहौ ।
५ समविषमान्त्य-	जगो गुपाला । सुभोर काला । कहै यशोदा । लहै प्रमोदा ।
६ भिन्नतुकान्त-	कुंजों कुंजों प्रति दिन जिन्हें, चाव से था चराया जो प्यारी थीं परम ब्रज के, लाड़िले को सदाही । खिन्ना दीना विकल बन में, आज जो घूमती हैं । ऊधो कैसे हृदयधन को, हाय ! वे धेनु भूलीं ।

३ यमक ।

(Repetition of words in different meaning)

यमक शब्द को पुनि श्रवण, अर्थ जुदो होजाय ।
शीतल चंदन चंदनहिं, अधिक अग्नि तें ताय ॥

यहां चंदन शब्द दो बार आया है एक अर्थ चंदन दूसरे शब्द का संबंध 'नहिं' के साथ निषेधवाचक है, यमक में ड और ल, व और ब, तथा र और ल का भेद नहीं माना जाता है ।

(यमकादौ भवेदैक्यं, डलोर्वबोर्लरोस्तथा) यथा—

भजन कह्यो तातें भज्यो, भज्यो न एकहु बार ।
दूर भजन जातें कह्यो, सो तू भज्यो गंवार ॥

सू०—जहां आदर, आश्चर्य, शोक तथा दृढ़तार्थ वही शब्द कई बार आवे सो यमक नहीं। यथा—राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम, ऐसे प्रयोग को वीप्सा कहते हैं (वीप्सायां द्विरुक्तिः) इसमें विशेष चमत्कार प्रतीत नहीं होता, अनुप्रास भलेही मान लिया जाय।

४ वक्रोक्ति।

(Ambiguous utterance)

(वक्रोक्ति द्वैभांति की, एक श्लेष पुनि काकु)

वाक्य शब्द के सुनतही, अर्थ अनेक लखाहिं।
वहै श्लेष वक्रोक्ति द्वै, भंग अभंग लखाहिं॥

१ भंग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग करि अर्थ जहँ, अन्य कछू होजाय।
श्लेष भंग पद ताहि को, कहत सुकवि समुदाय॥

१ गौरव शालिनी प्यारी हमारी, सदा तुमही इक इष्ट अहो।

(१) गौरव शालिनी (२) गौः + अवशा + अलिनी।
हौं नगऊ नहिं हौं अवशा अलिनी हुं नहीं अस काहे कहो।

२ अजौं तर्‍योना ही रह्यो, श्रुति सेवक इक अंग।
नाक बास बेसरि लह्यो, बसि मुकतन के संग॥

तर्‍योना=कान का भूषण, तर्‍यो नाहीं=तरा नहीं, श्रुति=कान, वेद। नाक=नाक, स्वर्ग। मुकतन=मोती, मुक्त हुए।

(इसको सभंग पद भी कहते हैं)

२ अभंग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग कीन्हें बिना, अर्थ विविध विधि होय ।
तहं वक्रोक्ति श्लेष को, पद अभंग है सोय ॥

कोतुम ! हरिप्यारी ! कहा, बानर को पुरकाम ।
श्याम सलोनी ! श्याम कपि, क्यों न डरैं तव बाम ॥

हरि (कृष्ण और बंदर) श्याम (कृष्ण और काला)

काकु वक्रोक्ति

जहँ कंठ ध्वनि भिन्न से, आशय जुदो लखाय ।
सो वक्रोक्ती काकु है, कविवर कहैं बुझाय ॥

अलिकुल कोकिल कलित यह, ललित बसंत बिहार ।
कहु सखि ! नहिं अइहैं कहा ? प्यारे अबहुं अगार ॥

क्या नहीं आवेंगे ? ध्वनि अवश्य आवेंगे ।

५ भाषा समक
(Mixed Language)

शब्दन की विधि एक जहँ, भाषा विविध प्रकार ।
वाक्य मनोहर होयँ तहँ, भाषा समक विचार ॥

द्रष्टुं तत्र विचित्रतां सुमनसां, मैं था गया बाग में ।
काचित्तत्र कुरंगशाव नयना. गुल तोड़ती थी खड़ी ।
उन्मद्भ्रू धनुषा कटाक्ष विशिखै. घायल किया था मुझे ।
तत्सीदामि सदैव मोह जलधौ हैदर गुज़ारे शुक्र ॥ १ ॥

जादिनतें जमुनातट बाहि बजावत बांसुरि नेक निहारो ।
होशमरफ़्त न मुंदबदस्त भरोस रहै दिनरैन तिहारो ।

हाफिज़ फ़िक्र कुदामनुमायम कोउ उपाव चलै न हमारो।
हे सखि कोउ उपाव रचौ फिर बारिक देखिय नंददुलारो॥२॥

हर नयन हुताश ज्वालया जो जलाया,
रति नयन जलौघे खाक बाकी बहाया।
तदपि दहति चित्तं माक क्या मैं करौंगी,
मदन सरसि भूयः क्या बला आग लागी॥३॥

यदा मुश्तरी कर्कटे वा कमाने, यदा चश्मखोरा ज़मींवासमाने।
तदा ज्योतिषी क्या लिखेगा पढ़ेगा, हुआ बालका बादशाही करेगा४

मुश्तरी=वृहस्पति, कर्कटे (कर्क में) कमाने (धनु में) चश्मखोरा (शुक्र) ज़मींवासमाने (दशमस्थान में)

६ श्लेष

(Paronomaic)

श्लेष शब्द पलटे बिना, औरहु अर्थ सुधार।
द्रोह करण काकोदर हु, रक्षा करण उदार

काकोदर (कालेनाग) की भी रक्षा करनेवाले उदार श्रीकृष्ण। काकोदर (जयंत) की भी रक्षा करने वाले उदार राम॥

१ कीकर पाकर तार, जामन फलसा आमला।
सेव कदम कचनार, पीपल रत्ती तून तज॥

२ हना राम कपि ने जबहिं, हरषीं जनकसुताहु।
राक्षसगण रोवत फिरहिं, हाहा राम हताहु॥

हत+आराम=विध्वंस किया बाग को

हाहा+आराम=हाय हाय बाग

७ प्रहेलिका

(Riddle)

प्रश्नहिं में उत्तर कढ़ै, कछू शब्द के फेर ।
सो प्रहेलिका दोय विधि, शब्द अर्थ गत हेर॥

(शब्दगत)

देखी एक अनोखी नारी, गुण उसमें इक सबसे भारी ।
पढ़ी नहीं यह अचरज आवे, मरना जीना तुरत बतावे॥ (नाड़ी)

हिंदी भाषा में ड़ के स्थान में र भी हो जाता है । यथा-
अनाड़ी, अनारी ।

(अर्थगत)

लक्ष्मीपति के कर बसै पांच बरण के माहिं ।
पहिलो अच्छर छांड़ि के सो देते क्यों नाहिं ॥ (सुदरशन)

८ चित्र

(Pictorial)

चित्र वर्ण विन्यास है, पदमादिक आकार ।
गोरख धंधा समनिरस, त्यागत सुकवि विचार॥

(१) कमलबद्ध

नैन बान हन बैन मन, ध्यान लीन मन कीन ।
चैन हैन दिन रैन तन, छिन छिन उन बिन छीन॥

यहां ध्यान देने से विदित होगा कि इस दोहे का प्रत्येक दूसरा वर्ण नकार है । एक नकार को मध्य में रखकर उसके चारों ओर गोलाकार अन्य वर्ण क्रमपूर्वक रखने से कमलाकार चित्र बन जाता है ।

(२) निरोष्ठ
(Non-labial)

छांड़ि पवर्गहि के बरण, और बरण सब लेत ।
लगैं न अधरा धर पढ़त, सो निरोष्ठ चित चेत॥

लोक लीक नीक लाज ललित मे नदलाल लोचन ललित लोल लीला के निकेत हैं।
सोहन को सोच ना सकोच लोक लोकन को देत सुख ताको सखी दूनो दुख देत हैं ।
केसोदास कान्हर के नेहही को कोर कसे अग रग राते रंग अग अति सेत हैं ।
देखि देखि हरि की हरनता हरिन नैनी देख्यो नहीं देखत ही हियो हरि लेत हैं ॥

(३) अमत्त
(The Non-symbolic)

बिन मात्रा बरणनि रचैं, ई ऊ ए कछु नाहिं ।
ताहि अमत्त बखानिये, समुझौ निज मन माहिं॥

जग जगमगत भगत जन रस बस भव भय हर कर करन अचर चर
कनक बसन तन असन अनल बड़ पट दल बसन सजल थर थर कर
अजर अमर अज बरद चरन धर परम धरम गन बरन सरन पर
अमल कमल बर बदन सदन जस हरन मदन मद मदन कदन हर

(४) अंतर्लापिका
(The Hidden insiae)

उत्तर आवे अंत में, प्रश्न तहां ही होय ।
सोई अंतर्लापिका, हेतु छंद महँ जोय ॥

१ भूषित को हरि अंग, कोह भरे तिय का करै? ।
कातें होत अनंग, को मराल हित मानसर? ॥

१ मां (लक्ष्मी) २ मान ३ मानसे ४ मानसर

२ कह गणपति पितु नाम देव अर्पित का कहिये ।
सज्जन को का कहत कौन हिय आनँद लहिये ॥

कौन चरित सुख देय कहां तें सरजू आई ।
छंद बद्ध को कियो राम जस भाषा गाई ॥
उत्तर-शंभु, प्रसाद, सुमति, हिय हुलसी ।
राम चरित, मानस, कवि तुलसी ॥

(५) वहिर्लापिका
(The Hidden outside)

बाहर से उत्तर कढ़ै, वाहिर्लापिका सोय ।

१ भाषैं काह सज्जन[1] को कौन शंभु वाहन[2] है का को सुख होत[3] काकी माला शिर[4] धारो है ।
काह गज बंधन[5] छवी ले हग[6] काके अति कौन हर[7] पुत्र सीप सुत[8] को विखारो है ॥
शोभा को सु[9] नाम का है कृष्ण नख[10] धारो कहा सिंधु से मिलत[11] कौन काह[12] अनियारो है ।
उत्तर के वर्णन में आदि अंत छोड़ दीजे मध्य लीजे सोहिये मनोरथ हमारो है ॥
उत्तर-यार कृपा करि नेक निहारिय ।

२ कह्यो नाम विपरीत करि, जामें भयो प्रसिद्ध ।
सो अनादि सम ह्वै गयो, जानि लेहु करि सिद्ध ॥
उत्तर-उलटा नाम जपत जग जाना । बालमीक भे ब्रह्म समाना ॥

(६) दृष्टिकूटक
(The Puzzler)

दृष्टि को छलने वाला कूट क्लिष्टता का बोधक है तथापि अन्तर्लापिका और वहिर्लापिका के समान यह चित्रालङ्कार का एक भेद माना जा सक्ता है । यथा—

१ सयाने, २ वरद, ३ सुकृत, ४ कपाल, ५ सांकर, ६ हरिणी, ७ गनेश, ८ मुकता, ९ पानिय, १० पहाड़, ११ सरिता, १२ नयन ।

अहि बल्ली रिपु की सुता, ताके पति को हार।
ता अरि पति की भामिनी, सदा बसैं तुव द्वार॥

अहि बल्ली नागबेल, नागबेल का रिपु हिम (हिमांचल), हिमांचल की कन्या पार्वतीजी, पार्वती पति शिवजी, शिवजी का हार सर्प, सर्प के शत्रु गरुड़जी, गरुड़जी के पति विष्णु भगवान उनकी भामिनी जो लक्ष्मीजी हैं सो सदैव आप के द्वार पर निवास करैं।

मेष राशितें पांच लौं, गने कढ़े जो नाम।
ता भक्षण द्वादश गये, आये नहिं घनश्याम॥

मेष राशि से पांचवां सिंह, सिंह का भक्षण मास अर्थात् महीना, सो बारह महीने हो गये घनश्याम नहीं आये, समर्थ महात्मा सूरदासजी ही ऐसी कविता में बहुत कृत कार्य्य हुए हैं।

(७) लोमविलोम

(The two faced in different sense)

सीधे उलटे बांचिये, औरै औरै अर्थ।
एक छंद में सुकविजन, प्रगटहिं दोउ समर्थ॥

लोम अनुलोम=यथा क्रम, विलोम=उलटा क्रम, यथा—

सैनन माधव ज्यों सरके सब रेख सुदेस सुबेसुसबै।
नैन बकीतचिजी तरुनी रुचि चीर सबे निमि काल फलै।
तैन सुनी जस भीर भरी धरि धीर बरी तसु कौन बहै।
मैन मनी गुरु चाल चलै सुभ सो बन में सरसी बल सै॥१॥
सैल बसी रस में न बसो भसु लै चल चारु गुनी मन मै।
है बन को सुतरी बरधीरि धरी भर भी सजनी सुन तै।
लै फल कामिनि बेस रची चिरुनीर तजी चित की बन नै।
बैस सुबे सुसुदेसु खरे बस के रस ज्यों बधमानन सै॥२॥

(८) गतागत
(The two faced conveying the same sense)

सूधो उलटो बांचिये, एकहिं अर्थ प्रमान ।
कहत गतागत ताहि कवि, केशवदास सुजान॥

यथा—माळ बनी वल केशवदास सदा वश केल बनी बलमा ।

(९) सिंहावलोकन
(Backward glance)

सिंहावलोकन का अर्थ सिंह समान आगे चलते हुए पीछे देखते जाना है, अर्थात् मुक्त पद को फिर ग्रहण करना। यथा—

नामहिं के सुमिरे सुख पायहौ छांड़ि यहै न गिनौ जग कामहिं ।
कामहिं कोउ न आयहैं ये सुत मातु मातु पिता प्रिय बंधु औ बामहिं ।
बामहिं हो सिगरे भव के सुख होत नतौ छनहूं बिसरामहिं ।
रामहिं राम ररौ रे ररौ सब वेद पुरान को हैं परिनामहिं ॥

अर्थालङ्कार ।

(A figure of speech in sense)

व्यंगरु रस तें भिन्न जो, हृदय रूप सरसाहिं ।
चमत्कार भूषण सरिस, सोई भूषण आहिं ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरण सरस सुवित्त ।
भूषण बिन न बिराजई, कविता बनिता मित्त ॥

यह बात नहीं कि बिना अलङ्कार के कविता हो ही नहीं सकती अभिप्राय यह है कि कविता कैसीही उत्तम अच्छे वर्ण और रसयुक्त क्यों न हो परन्तु अलङ्कार हीन होने के कारण नग्न कहाती है अतएव अलङ्कार का ज्ञान परमावश्यक है काव्य में जो चमत्कार है उस चमत्कार को ही अलङ्कार कहते हैं जैसे कोई कहे कि "वह पुरुष बड़ा विद्वान है" तो इस वाक्य में कोई चमत्कार नहीं, यदि यही वाक्य इस प्रकार कहा जाय कि "वह पुरुष दूसरा बृहस्पति है" तो इस कथन में चमत्कार आगया । अलङ्कार काव्य के हृदय स्वरूप है । यथा—

छंद चरण भूषण हृदय, करमुख भावऽनुभाव ।
चख थाई श्रुति संचरी, साहित अंग सुभाव ॥

शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार में भेद यह है कि शब्दालङ्कार में उसी अर्थ के दूसरे शब्द पलट दें तो अलङ्कारता चली जाती है । अर्थालङ्कार में उसी अर्थ के दूसरे शब्द रखने से अलङ्कारता नहीं जाती ।

अलङ्कार में प्रथम चार बातों का जानना आवश्यक है अर्थात् १ उपमेय, २ उपमान, ३ वाचक और ४ धर्म ।

जैसे-

जाकी तुलना कीजिये, सो उपमेय बखान (स्त्री का मुख)
जासों तुलना कीजिये, सो जानो उपमान (चन्द्रमा)
तुलना बोधक शब्द जो, वाचक कहिये ताहि (सदृश)
गुण उपमे उपमान को, गहत धर्म स्वइ आहि (उज्ज्वल)

उपमेय वह है जिसकी तुलना किसी दूसरे वस्तु से की जावे, जैसे मुख, पद, अधर आदि। उपमेय को वर्ण्य, वर्णनीय, विषय, प्रस्तुत, वा प्रकृत भी कहते हैं।

उपमान वह है जिससे तुलना की जावे अर्थात् जिसकी उपमा दीजावे, जैसे चन्द्र, कमल आदि। उपमान को अवर्ण्य, अवर्णनीय, विषयी, अप्रस्तुत वा अप्रकृत भी कहते हैं।

वाचक वह शब्द है जिससे तुलना का बोध हो जैसे, से, सो, सरिस, समान, इव इत्यादि। कविजनों के मत में जहां-इव, यथा, ज्यों, जैसे, सी, से, सो, लौं इत्यादि उपमावाचक शब्द कहे गये हों उसको श्रौती वा शाब्दी उपमा कहते हैं और जहां—तुल्य, तूल, सम, समान, सरिस, सदृश, वत् इत्यादि उपमा-वाचक शब्द कहे गये हों उसको आर्थी उपमा कहते हैं।

धर्म वह है जिसमें उपमेय और उपमान का साधारण धर्म प्रगट हो, जैसे उज्ज्वलता, मृदुता, कठोरता इत्यादि।

१ पूर्णोपमा

(Complete Simile)

पूर्णोपम वाचक धरम, उपमे अरु उपमान।
ससि सो उज्ज्वल तिय बदन, पल्लव से मृदु पान॥

पूर्ण+उपमा=पूरी उपमा, उप=समीप, मा=नापना, समीपता से विशेष ज्ञान। जिसमें भेद रहते हुए भी समान धर्म कहा जाय सो उपमा है। पूर्णोपमा में उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म चारों रहते हैं। ससि सो उज्ज्वल तिय वदन को गद्य में इस प्रकार कह सकते हैं स्त्री का मुख कैसा उज्ज्वल है जैसा चंद्र वैसेही पल्लव से मृदु पान को इस प्रकार कह सकते हैं हस्त कैसे कोमल हैं जैसे पल्लव। यथा—

करि कर सरिस सुभग भुज दंडा।

जहां उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म इनमें से एक दो वा तीन का लोप हो उसे लुप्तोपमा जानो, यथा—

(१) लुप्तोपमा
(Elliptical Simile)

लुप्तोपम है अंग जहँ, न्यून चारतें देख।
बिजुरीसी पंकज मुखी, कनकलता तिय लेख॥

यहां बिजुरीसी पंकज मुखी धर्म लुप्तोपमा और कनकलता तिय लेख, वाचक धर्म लुप्तोपमा हैं, उपमा के और भी भेद हैं।

(२) मालोपमा
(Garland of Similes)

मालोपम उपमेय की, उपमा बहुत प्रकार।
अलि से मावस रैन से, बाला तेरे बार॥

माल पंक्ति को कहते हैं। यथा—

बंदौं खल जस सेस सरोषा। सहस बंदन बरनै पर दोषा॥
पुनि प्रणवौं पृथुराज समाना। पर अघ सुनै सहस दस काना॥
बहुरि शक्र सम बिनवौं तेही। संतत सुरानीक हित जेही॥

सुरानीक=देवताओं की फ़ौज जिससे राज्यमद सूचित होता है । सुरा=मद, शराब । यथा—

बाज ज्यों विहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर त्यों विपच्छ बंस पर शेर सिवराज है ।

(३) रशनोपमा
(Girdle of Similes)

रशनोपम उपमेय जहँ, होत जात उपमान ।
कुलसी मति मति सोजु मन, मनहीं सो गुरुदान॥

रशना=कर्धनी वा शृंखला । यथा—

काव्यवर जग सोहै कैसो सोहै काव्यवर जैसो मानसर सोहै सरन को अधिराज । कैसो सोहै मानसर कहौ कवि भानु मोसों जैसो सोहै द्विजराज कैसो सोहै द्विजराज । मदन मुकुर जैसो मदन मुकुर कैसो प्यारी के वदन पर जैसी रही छबिछाज । प्यारी को बदन कैसो सुख को सदन जैसो सुख को सदन कैसो जैसो शुभ रामराज ।

२ अनन्वय
(Comparison Absolute)

जाकी उपमा ताहि सों, दिये अनन्वय मान ।
तेरे मुख की जोड़ को, तेरो ही मुख जान ।

अन्+अन्वय=नहीं है सम्बंध जिसका, यथा—१ इन सम ये उपमा उर आनी, २ तू मो तुही दशरत्थ दुलारे, ३ सुन्दर नंद किशोर से सुन्दर नंद किशोर ।

३ उपमानोपमेय

(Reciprocal comparison)

सो उपमानुपमेय, उपमा लागै परस्पर ।
तुव दृग खंजनसेय, खंजन हैं तुव नैन से॥ यथा—

१ वे तुम सम तुम उन सम स्वामी ।
२ राम कथा मुनिवर्य बखानी, सुनी महेश परम सुख मानी ।
३ ऋषि पूछी हरि भगति सुहाई, कही शंभु अधिकारी पाई ।
४ औधपुरी अमरावतिसी अमरावति औधपुरीसी विराजे ।

इसको उपमेयोपमा भी कहते हैं ।

४ प्रतीप

(Converse)

(१) सो प्रतीप उपमेय सम, जब कहिये उपमान ।
लोचन से अंबुज बने, मुख सो चंद बखान ॥

प्रतीप=प्रतिकूल, उलटा । यहां उपमानही उपमेय सा वर्णित है । यथा—

उतरि नहाये जमुन जल, जो शरीर सम श्याम ।

(२) उपमे को उपमान तें, आदर जबै न होय ।
गर्व करत मुख को कहा, चंदहिं नीके जोय॥

यहां उपमेय का अनादर है ।

का घूंघट मुख मूंदहु अबला नारि ।
चंद सरग पर सोहत इहि अनुहारि॥

(३) जहँ बरणत उपमेय तें, हीनो करि उपमान ।
तीछन नैन कटाच्छ तें, मंद काम के बान ॥

यहां उपमान का अनादर है ।

१ सिय मुख समता पाव किमि, चंद्र बापुरो रंक ।
२ कुलिशहु चाहि कठोरता, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस रघुनाथ कर, बूझ परै कहु काहि ॥
३ देखो नँद नंद सुखकंद ब्रजचंद आजु राधे मुखचन्द चंद मंद करि डारो है ॥

(४) उपमे की उपमान जब, समता लायक नाहिं !
अति उत्तम् दृग मीन से, कहे कौन विधि जाहिं॥

यहां उपमान की योग्यता माननीय नहीं । यथा—
सीय बदन सम हिम कर नाहीं ।

(५) व्यर्थ होय उपमान जब, उपमे को लखि सार ।
दृग आगे मृग कछु न ये, पंच प्रतीप प्रकार ॥

यहां उपमान बिलकुल अयोग्य ठहरा गया । यथा—
कोटि काम उपमा लघु सोऊ ।

५ रूपक

(Metaphor)

रूपक साम्य निषेध बिन, जहँ उपमे उपमान ।
मिलि तद्रूप अभेद ह्वै, अधिक न्यून सम जान ॥

रूपक=किसी के सदृश रूप का धारण करनेवाला चाहे स्वरूप से वा गुण से, मनोहर आकृति और स्वभाव जैसे—हस्तकमल, मुखकमल, नेत्रकमल, मुखचन्द्र इत्यादि ।

तद्रूप अधिक

१ मुख शशि वा शशितें अधिक, उदित ज्योति दिन रात ।

२ विष वारुणी बंधु प्रिय जेही, कहिय रमा सम किमि वैदेही ॥

तद्रूप न्यून

१ सागर तें उपजी न यह, कमला अपर सुहात ।

२ राम मात्र लघु नाम हमारा ।

३ दुइ भुज के हरि रघुबर सुंदर बेस, एक जीभ के लछिमन सुंदर सेस ।

तद्रूप सम

१ नैन कमल ये ऐन हैं, और कमल किहि काम ।

२ लखन उतर आहुति सरिस, भृगुपति कोप कृशानु ।

अभेद अधिक

१ गमन करत नीकी लगत, कनकलता यह बाम ।

२ गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन ।

३ हरिहर कथा विराजत बेनी, सुनत सकल मुद मंगल देनी ।

अभेद न्यून

१ हे गधे तू उर बसी, धरे मानुषी देह ।

२ अति खल जे विषयी बक कागा ।

३ सब के देखत व्योम पथ, गयो सिंधु के पार ।
पक्षिराज बिन पक्ष को, वीर समीर कुमार ॥

अभेद सम

राम कथा सुंदर करतारी, संशय विहग उड़ावनहारी ।

सू०—जहां उपमेय को उपमान मानकर फिर उसकी तुलना उपमान से करें सो तद्रूपरूपक है और जहां उपमेय ही को उपमान मानकर फिर उसकी तुलना उपमान से न की जावे सो अभेद रूपक है ।

६ परिणाम
(Commutation)

उपमे की किरिया करै, उपमा सो परिणाम ।
लोचन कंज बिशाल नें, देखत देख्यो बाम ॥

परिणाम=स्वभाव का बदलना । यथा—

१ कर कमलन धनु सायक फेरत ।
२ मामवलोकय पंकज लोचन ।
३ है घनश्याम पै तेरो पपीहरा है ब्रजचंद पै तेरो चकोर है

७ उल्लेख
(Representation

(१) सो उल्लेख जु एक को, बहु समझैं बहु रीति ।
जाचक सुरतरु, तिय मदन, अरि को काल प्रतीत ।

उद्+लेख=उत्कृष्टलेख, जहां एक को अनेक जन अनेक प्रकार से समझें ।

देखहिं भूप महा रणधीरा । मनहुं वीर रस धरे सरीरा ॥
रहे असुर छल जो नृप भेखा । तिन प्रभु प्रगट काल सम देखा ॥

(२) बहु विधि बहु गुण एक के, बरणे द्वितीय उलेख ।
तू रण अर्जुन, तेज रवि, सुर गुरु बचन विशेख ॥

जहां एक को एक जन अनेक प्रकार से वर्णन करे सो दूसरा भेद है, जैसे तू रण में अर्जुन, तेज में सूर्य और बचनों में बृहस्पति है । यथा—

सब गुण भरा ठकुरवा मोर, अपनै पहरू अपनै चोर ।

८ स्मरण

(Rhetorical Recollection)

सुमिरन लखि सुनि काहु को, सुधि आवै जहँ खास ।
सुधि आवत वा बदन की, देखे सुधा निवास ॥

स्मरण सुनने देखने सोचने तथा स्वप्न सेभी हो सकता है।

१ प्राची दिशि शशि उग्यो सुहावा ।
सिय मुख सरिस देखि सुख पावा ॥

२ सघन कुंज छाया सुखद, शीतल मंद समीर ।
मन ह्वै जात अजौं वहै, वा जमुना के तीर ॥

९ भ्रांति

(Mistake)

भ्रांति और को औरही, निश्चय जब अनुमान ।
तुव सँग फिरत चकोर, है, बदन सुधानिधि जान॥यथा-

१ कपि करि हृदय विचार, दीन मुद्रिका डारि तव ।
जानि अशोक अँगार, सीय हर्षि उठि कर गहेउ॥

२ पाँय महावर देन को, नायन बैठी आय ।
फिर फिर जान महावरी, एंड़ी मीड़त जाय ॥

सू०—उन्माद (पागलपने से वा चित्त ठिकाने न रहने) से जो भ्रांति होती है उसमें चमत्कार नहीं ।

१० संदेह

(Doubt)

अलंकार संदेह में, कि धौं वहै के आन ।
बदन किधौं यह शीतकर, ठीक परत नहिं जान ॥

१ राम लखन सखि होहिं कि नाहीं ।

२ कै तुम तीन देव महँ कोऊ ।

११ शुद्धापह्नुति

(Concealment pure)

शुद्धापह्नुति झूंठ लहि, सांची बात दुराहिं ।
नैन नहीं ये मीन जुग, छबि सागर के माहिं॥

शुद्ध=स्वच्छ, अपह्नुति=छिपाना ।

१ यह मुख नहीं चंद्रमा है ।

२ बंधु न होय मोर यह काला ।

अपह्नुति के भेद नीचे लिखे हैं ।

कैतवापह्नुति

(Concealment of the deceitful)

कैतव पह्नुति एक को, मिस करि बरणत आन ।
तीछन नैन कटाच्छ मिस, बरसत मन्मथ बान ॥

कैतव=छल, ब्याज, मिस । इस अलङ्कार का वाचक "मिस" है ।

१ लच्छी नरेस बात सब सांची । तिय मिस मीच सीस पर नाची॥
२ पठै मोह मिस खगपति तोही । रघुपति दीन बड़ाई मोही ॥

हेत्वपह्नुति

(Concealment with a reason)

वस्तु दुरइये युक्ति सों, हेतु अपह्नुति सोय ।
तीव्र चंद्र नहिं निशि रवी, बड़वानलही जोय॥

चंद्र को देखकर कहती है, तीव्र है अतएव चंद्र नहीं, रात्रि है अतएव सूर्य नहीं—यह तो बड़वानल ही है । यथा—

प्रभु प्रताप बड़वानल भारी । शोषेउ प्रथम पयोनिधि वारी ॥
तव रिपु नारि रुदन जलधारा । भरेउ बहोरि भयउ तिहि खारा॥

पर्य्यस्तापह्नुति
(Concealment transferred)

पर्य्यस्तापह्नुति धरम, आन वस्तु में रोप।
है न सुधाधर की जु यह, वदन सुधाधर ओप॥

पर्य्यस्त=फेंका हुआ। यथा—

१ मुकुट न होहिं भूप गुण चारी।
२ है न सुधा यह है सुधा-संगति साधु सुजान।
३ कालकूट विष नाहिं, विष है केवल इंदिरा।
हर जागत छकि वाहि, इहि सँग हरि नींद न तजत॥

भ्रांत्यपह्नुति
(Concealment under a mistake)

भ्रांति अपह्नुति सत कहे, पृच्छक को भ्रम जाय।
ताप कंप ज्वर है सखी!, ना सखि मदन सताय॥

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू। लूकन अशनि न केतुन राहू॥
ये किरीट दशकंधर केरे। आवत बाल तनय के प्रेरे।

सू०—इसको भ्रांतापह्नुति भी कहते हैं।

छेकापह्नुति
(Concealment of the skilful)

छेक अपह्नुति युक्ति करि, पर सों बात दुराय।
करत अधर छत पिय! नहीं, सखी सीत ऋतु बाय॥ यथा

कछु न परिच्छा लीन गुसाईं। कीन्ह प्रणाम तुम्हारेहि नाईं॥

सू०—मुकरी (मुकर जाना) इसी के अंतर्गत है।

१ अर्ध निशा वह आयो भौन। सुंदरता बरणै कवि कौन॥
निरखतही मन भयो अनंद। क्यों सखि सज्जन! ना सखि चंद॥

२ शोभा सदा बढ़ावन हारा । आंखिनतें खिन करौं न न्यारा ॥
आठ पहर मेरो मनरंजन । क्यों सखि सज्जन? ना सखि अंजन॥

३ हरित रंग मुहिं लागत नीको। वा बिन सब जब दीखत फीको ॥
उतरत चढ़त मरोरत अंग । क्यों सखि सज्जन? ना सखि भंग ॥

४ आली ने मो पास पठायो । अंग अंग सब खोलि दिखायो ॥
वासों मेरो भयो जु मेल । क्यों सखि सज्जन? ना सखि तेल ॥

५ अति सुरंग है रंग रँगीलो । है गुणवंत बहुत चटकीलो ॥
राम भजन बिन कबहुं न सोता।क्यों सखि सज्जन?ना सखि तोता

१२ उत्प्रेक्षा

(Poetical Fancy)

उत्प्रेक्षा सम कल्पना, मनहुं तासु संकेत ।
कैकइ कटु बोलत मनौ, लौन जरे पर देत ॥
और भेद याके गुनौ, वस्तु हेतु फल लेखि ।
वस्तु द्विविधि उक्तासपद, अनुक्तासपद देखि॥
हेतऽरुफल सिद्धास पद, असिद्धास पद मान।
वाचक जहँ नाहिं कहत हैं, गम्योत्प्रेक्षा जान ॥

उत्प्रेक्षा=(उत्=प्रधानता+प्र=बल+ईक्ष=देखना) बल से प्रधानता करके देखना अर्थात् जहां जो नहीं है उसे मानकर देखना अभिप्राय यह है कि उपमेय में उपमान का भेद रहते हुए भी कुछ कल्पित आरोप कर लिया जाय । उक्त=कहा हुआ अनुक्त=न कहा हुआ, आस्पद=स्थान, पद । उदाहरण नीचे देखिये ।

वस्तूत्प्रेक्षा-उक्तास्पदा

कोकिन के बिरहागिकी, धूम घटा तम मानु।

यहां तम (अंधकार) मानो चक्रवाकों के विरहाग्नि की धूम घटा है तम वस्तु में धूम घटा की सम कल्पना है अतएव वस्तूत्प्रेक्षा, तम और धूम घटा दोनों विद्यमान हैं अतएव उक्तास्पदा, यथा—

लता भवन तें प्रगट भे, त्यहि औसर दुउ भाय।
निकसे जनु जुग विमल विधु, जलद पटल विलगाय॥

वस्तूत्प्रेक्षा-अनुक्तास्पदा

अंजन बरसत गगन यह, मानो अथये भानु।

यहां तम जो विद्यमान है उसे न कहकर आविद्यमान अंजन की कल्पना की अतएव अनुक्तास्पदा.

हेतूत्प्रेक्षा-सिद्धास्पदा

मनौ कठिन आँगन चली, तातें राते पाँय।

यहां कठिन आँगन में चलना ललाई का कारण नहीं अहेतु में हेतु की कल्पना की गई अतएव हेतूत्प्रेक्षा. चलना सिद्ध है अतएव सिद्धास्पदा यथा—

मनहु प्रेम वश विनती करहीं। हमहिं सीय पद जानि परि हरहीं॥

हेतूत्प्रेक्षा-असिद्धास्पदा

मुख सम नहिं यातें मनो, चंदहिं छाया छाय।

यहां मुख समता की चाह छाया का हेतु न होते भी हेतु कल्पित हुआ अतएव हेतूत्प्रेक्षा, मुख समता की चाह असिद्ध अतएव असिद्धास्पदा यथा—

प्रभु कह गरल बंधु शशि केरा। अति प्रिय निज उर दीन बसेरा॥

फलोत्प्रेक्षा-सिद्धास्पदा

कैकइ कटु बोलत मनौ, लौन जरे पर देय ।

यहां पर जले पर निमक छिड़कने की वेदना कटु बोल का फल नहीं तथापि तद्वत् फल की कल्पना की गई, कटु बोल सिद्ध ही है ।

फलोत्प्रेक्षा-असिद्धपदा

तुव पद समता को कमल, इक पादहिं जल सेय ।

कमल स्वतः जल में रहता है चरणों की समतारूपी फल की प्राप्ति के लिये नहीं तथापि फल कल्पित किया गया । जड़ कमल में जल सेवन करना असिद्ध है अतएव असिद्धास्पदा इसी को चेतन धर्मोत्प्रेक्षा (Personification) भी कहते हैं मनु जनु नहीं कहा अतएव गम्योत्प्रेक्षा भी है ।

सू०-उत्प्रेक्षा में "यथा" वा "ज्यों" शब्द का कथन दोष है इसमें "मनु जनु" का प्रयोग समुचित है यदि पद में क्रिया किसी हेतु से कही गई हो तो हेतूत्प्रेक्षा और उस से किसी फल की इच्छा प्रगट हो तो फलोत्प्रेक्षा जानो । उत्प्रेक्षा की समर्थन को अर्थान्तरन्यास का कथन अनुचितार्थ दोष है जैसे-इच्छत हिमगिरि तमहिं मनु गुफा लीन रवि भीत, शरणागत छोटेहु पर करत बड़े जन प्रीत । यहां अचेतन तम को सूर्य से भय होनाही संभव नहीं फिर हिमालय द्वारा यह केवल व्यर्थ संभावना है इस के समर्थन के लिये उत्तरार्द्ध में अर्थान्तरन्यास का कथन व्यर्थ है ॥

१३ अतिशयोक्ति

(Hyperbole)

अतिशयोक्ति भूषण तहां, जहँ केवल उपमान ।
कनकलता पर चंद्रमा, धरे धनुष द्वै वान ॥

जहां केवल उपमानही कथन होता है वहां अतिशयोक्ति जानो जैसे यहां कनकलता से सुंदर स्त्री, चंद्रमा से मुख, धनुष से भौंहें और बाणों से नयनों का बोध होता है। इसी को रूपकातिशयोक्ति भी कहते हैं, यथा—

१ अरुण पराग जलज भरि नीके, ससिहि भूष अहि लोभ अमीके ।
यहां कर नहीं कहा जलज कहा, मुख नहीं कहा शशि कहा।

२ आज किधर चांद निकला.

सापह्नवातिशयोक्ति

(H-Conceald)

सापह्नवपह्नुति सहित, रूपशयोक्ति- बखान ।
अहि शशि मंडल पै लसै, जिय पताल जिनजान ॥

यहां मुख रूप चंद्रमा के ऊपर बेणी रूप अहि (सर्प) का जो वर्णन है सोई अतिशयोक्ति है और अहिका निवास यथार्थ में पाताल में है उसे कहा कि पाताल में मत जानो यह अपह्नव है, यथा—

१ तुवमृदु चितवन में सुधा, भूलि कहत विधु मांहिं ।

२ तारे मंद अंबर सराहैं सुर भूलि चारु चंद्रिका वलित रामचंद्र को वदन है ।

भेदकातिशयोक्ति
(H-Differential)

भेदकातिशयोक्ति बहु, औरै बरणत जात ।
औरै हँसिबो बोलिबो, औरै याकी बात ॥

भेदक=भेद करानेहारा । जहां यह कहा जाय कि उसकी बातही कुछ और है वहीं यह अलङ्कार होगा, यथा—

१ औरै हसन बिलोकिबो, औरै बचन उदार ।
तुलसी ग्राम बधून के, देखे रह न सँभार ॥
२ अनियारे दीरघ नयन, किती न युवति सयान ।
वह चितवन औरै कछू, जिहि बस होत सुजान ॥

संबंधातिशयोक्ति
(H-Connective)

संबंधातिशयोक्ति वह, कह अयोग में योग ।
वा पुर के मंदिर कहैं, शशिलौं ऊंचे लोग ॥

यहां मंदिर अयोग्य में असंभव उँचाई रूप योग्यता कथन की गई, यथा—

जो संपदा नीच गृह सोहा । सो बिलोकि सुरनायक मोहा ॥*

असंबंधातिशयोक्ति
(H Disconnective)

असँबंधातिशयोक्ति वह, जोग अजोग बखान ।
तो कर आगे कल्पतरु, क्यों पावै सनमान ॥

यहां कल्पतरु योग्य को हाथ की अपेक्षा अयोग्य ठहराया गया, यथा—

* यह उदाहरण अत्युक्ति में भी घटित होता है (उभयालंकार)

१ जो सुख भा सिय मातु तन, देखि राम वर वेष ।
सो न सकहिं कहि कल्पशत, सहस सारदा शेष ॥
२ नव पल्लव फल सुमन सुहाये । निज संपति सुर रूख लजाये ॥
३ जिहि वर बाजि राम असवारा । तिहि शारदां न वरणैं पारा ॥

अक्रमातिशयोक्ति
(H-Orderless)

अतिशयोक्ति अक्रम जबै, कारण कारज संग ।
तुव सर लागत साथही, धनुषहि अरु अरि अंग ॥

यहां धनुष में और शत्रु के अंग में बाण एक साथही लगना कहा गया, यथा—

संधानेउ प्रभु विशिख कराला । उठी उदधि उर अंतर ज्वाला ॥

चपलातिशयोक्ति
(H-Fickled)

है चपलाति शयोक्ति वह, सुनत हेतु हो काज ।
मुंदरी हू कंकण भई, पीव गमन सुनि आज ॥

चपला=चंचला, बिजली । पीय के गमन सुनते ही इतनी दुबली हो गई कि मुँदरी ज्यों की त्यों रहते भी कंकण सी ढीली हो गई । इस अलंकार में सुनना वा देखना एकही है, यथा—

१ विमल कथा कर कीन अरंभा । सुनत नसाय मोह मद दंभा ॥
२ तब शिव तीसर नयन उघारा । चितवत काम भयउ जरि छारा ॥

अत्यंतातिशयोक्ति
(H-Highest degree)

अत्यंतातिशयोक्ति जहँ, हेतु पूर्वही काज ।
प्रथम उबार्‌यो आय हरि, पुनि टेर्‌यो गजराज ॥ यथा-

१ कह कपि प्रथम दच्छिणा लेहू । पाछे हमहिं मंत्र तुम देहू ॥
२ पद पखारि जलपान करि, आप सहित परिवार ।
पितर पार करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयो लै पार ॥

१४ तुल्ययोगिता

(Equal Pairing)

(१) तुल्य धर्म वर्ण्यैं वरण, वा अवर्ण्य इक संग ।
बैन बैन बांके भये, प्रगटत यौवन अंग ॥

जहां अनेक उपमेयों का वा अनेक उपमानों का क्रिया वा गुण कर के एकही धर्म संबंध कथन किया जाय वहां तुल्य योगिता जानो यहां बैन नैन (वर्ण्य) का एक ही धर्म बांके होना कहा गया, यथा--.

वर्ण्य वर्ण्य

१ बैन नैन बांके भये, प्रगटत यौबन अंग ।
२ गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं । मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं ।
३ श्रीदशरत्थ सों मांगिबे हेतु गुनी निगुनी द्वउ द्वार पै डोलैं ।
४ चरण धरत चिंता करत, तनिक न भावै सोर ।
सुबरण को ढूंढ़त फिरत, कवि कामी अरु चोर ॥

अवर्ण्य अवर्ण्य

१ लखि कोमलता अंग तुव, हे कामिनि बिन खोर ।
को न गुलाबरु मालती, कदली गुनत कठोर ॥
२ कमल कोक मधु कर खग नाना । हरषे सकल निसा अवसाना ॥
३ अरुणोदय सकुचे कुमुद, उड़गन ज्योति मलीन ॥

इस आधे दोहे के उदाहरण में हेतु अलंकार का भी आभास है अतएव उभयालंकार है यदि पूरा दोहा कहें (तिमि तुम्हार आगमन सुनि भये नृपति बल हीन) तो वर्ण्य अवर्ण्य के संबंध से दीपकालंकार होगा.

(२) शत्रु मित्र पै एक सम, जहां होत व्यवहार।

१ गुण निधि नीके देत तू, तिय को अरि को हार॥ यथा—

२ कोऊ काटौ क्रोध करि, वा सींचौ करि नेह।
बेधत पेड़ बंबूर के, तऊ दुहुन की देह॥

३ बंदौं संत समान चित, हित अनहित नहिं कोय।
अंजुलि गत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोय॥

४ जे निसिदिन सेवा करैं, अरु जे करैं विरोध।
तिन्हैं परम पद देत हरि, कहौ कौन यह बोध॥

५ कीरति भणित भूति भल सोई।
सुरसरि सम सब कर हित होई॥

(३) गुणगण बहु के तुल्य करि, एकहि ठौर बखान।

१ लोकपाल सुरपति वरुण, यम कुबेर नृप जान॥ यथा—

२ प्रभु समर्थ सर्वज्ञ शिव, सकल कला गुण धाम।
जोग ज्ञान वैराग्य निधि, प्रणत कल्प तरु नाम॥

३ तुम पितु मातु बंधु प्रिय मोरे।

उदाहरण नं. ३ यदि विधिपूर्व्वक कथन किया जाय तो उल्लेख होगा।

सू०—सर्व्वदा और सर्वत्र तुल्य धर्म के योग में अलङ्कारता नहीं, कभी अथवा कहीं तुल्य धर्म के योग हो जाने में ही तुल्ययोगिता है यहां योग का अर्थ योग्य लेना ठीक नहीं संयोग लेना ठीक है अभिप्राय यह है कि किसी विवक्षा (करने की इच्छा) की इसमें अपेक्षा है।

१५ दीपक

(Illuminator)

दीपक वर्ण्य अवर्ण्य को, एकै धर्म समान ।
गृह गढ़ गिरि अरु गुणिन को, होय उच्चतामान ॥

दीपक में प्रस्तुत (वर्ण्य) और अप्रस्तुत (अवर्ण्य) अर्थात् उभयपक्ष का धर्म एक बारही कथन किया जाता है सो यह अलंकार वहीं होगा जहां दीपन का कथन चमत्कारी हो यहां गृह, गढ़, गिरि अवर्ण्य, गुणिन वर्ण्य, उच्चता धर्म, यथा—

१ सोहत हैं मद सों कलभ अति प्रताप सों भूप ।
भूप (वर्ण्य) हांथी (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

२ सोहत भूपति दान सों, फल फूलन आराम ।
भूपति (वर्ण्य) आराम=बाग (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

३ सँग तें जती कुमंत्र तें राजा । मान तें ज्ञान पान तें लाजा ॥
प्रीति प्रणय बिनु मद तें गुनी । नाशहिं वेगि नीति अस सुनी ॥
राजा (वर्ण्य) अन्य (अवर्ण्य) नाशहिं (धर्म)

४ राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरहुं, जो चाहसि उजियार ॥
जीभ (वर्ण्य) देहरी (अवर्ण्य) उजियार (धर्म)

५ अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी
सगुण (वर्ण्य) अगुण (अवर्ण्य) प्रबोध होना (धर्म)

नीचे दो उदाहरण ऐसे देते हैं जिनमें जिसे प्रस्तुत मानो सो वर्ण्य और शेष अवर्ण्य हैं, यथा—

६ दृग अंजन, मुख पान तें, मिहँदी तें कर जान ।
जावक तें तिय चरण की, शोभा अधिक बखान ॥

७ लोभी जन धन लाभ अरु, तिय जन संग सकाम ।
साधु सकल श्रीराम के, नाम लहत आराम ॥

सू०—तुल्य योगिता में केवल वर्ण्य का वर्ण्य के साथ वा अवर्ण्य का अवर्ण्य के साथ सम्बंध है दीपक में उभय पक्ष का अर्थात् वर्ण्य के साथ अवर्ण्य का संबंध है तुल्य योगिता में विवक्षा की अपेक्षा है दीपक में धर्म स्वयं सिद्ध है । कोई२ कवि देहरी दीपक को अलग अलंकार मानते हैं अर्थात् ऐसा पद रखना जो दोनों ओर लागू हो परंतु प्राचीनों ने उसे दीपक अलंकार के ही अंतर्गत माना है देहरी दीपक को इसी ग्रंथ के न्याय प्रकरण में देखो ।

१६ कारक दीपक

(The case Illuminator)

कारक दीपक एक में, क्रम तें भाव अनेक ।
जाति चितय आवति हँसति, पूछति बात विवेक ॥

बहुतसी क्रमपूर्वक क्रियाओं में कर्त्ता एक बारही कथन किया जाय, यथा—

१ लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ।

२ बार बार मुख चुंबति माता । नयन नेह जल पुलकित गाता ॥

१७ आवृत्ति दीपक

(Illuminator repeated)

आवृत्ति दीपक तीन विधि, आवृत्ति पद की होय ।
घन बरसौं है री सखी, निसि बरसौं है सोय ॥

आवृत्ति=कई बार, घन बरसने पर ही है, रात्रि बरस सी हो रही है, यथा—

हे विधि मिलै कवन विधि बाला ।

अर्थावृत्ति

दूजी आवृति अर्थ की, शब्द पृथक इक सार ।
कूजहिं कोकिल चाव सों, गूंजहिं भृंग अपार ॥

कूजहिं गूंजहिं शब्द पृथक् तात्पर्य्य एक ।

पदार्थावृत्ति

पद अरु अर्थ दुहून की, आवृत्ति तीजी आहि ।
मत्त भये हैं मोर अरु, चातक मत्त सराहि ॥

मत्त मत्त पदावृत्ति, मत्त भये और मत्त सराहि—अर्थावृत्ति

१ भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच ।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

लहहिं लहहिं सराहिय सराहिय—पदार्थावृत्ति

२ तोऱ्यो नृपगण को गरब, तोऱ्यो हर को दंड ।
राम जानकी जीय को, तोऱ्यो दुःख अखंड ॥

तोऱ्यो तोऱ्यो तोऱ्यो—पदार्थावृत्ति

१८ एकावलि

(The Necklace)

एकावलि पद रीति जहँ, गृहित मुक्त पद जान।
दृग श्रुति लौं श्रुति बाहुलौं, बाहु जंघ लौं मान॥

अवलि=पंक्ति, गृहीत=ग्रहण किया हुआ, मुक्त=त्यागा हुआ इसमें पूर्व पूर्व के प्रति उत्तरोत्तर वस्तु का विशेषण भाव से स्थापन वा निषेध होता है, यथा—

१ बिन गुरु होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय विराग बिन।

इसे "श्रृंखला" भी कहते हैं।

२ सो जल कहिये काह, जहां चारु पंकज नहीं।
पंकज है सो काह, जहां भ्रमर नहिं लीन हैं॥
भ्रमन में कह सार, मधुर मधुर गुंजन न जो।
गुंजन हू बिन सार, जो न हरत मन जनन के॥

१९ प्रति वस्तूपमा

(Typical Comparison)

प्रतिवस्तूपम धर्मसम, जुदे जुदे पद जान।
सोहत भानु प्रताप सों, लसत सूर धनु बान॥

प्रति+वस्तु+उपमा। उपमान और उपमेय इन दोनों के वाक्यों में एकही साधारण धर्म पृथक् पृथक् शब्द द्वारा कथन हो, 'सोहत भानु प्रताप सों' यह उपमान वाक्य है और 'लसत सूर धनुबान' यह उपमेय वाक्य है इसमें प्रत्येक वाक्य एक दूसरे से स्वतंत्र रहता है।

कुवलयानंद के मत से कहीं२ वैधर्म्य से भी दृढ़ीकरणार्थ धर्म की साम्यता बताई जाती है । उदाहरण नीचे देखिये—

१ राजत राम अतुल बल जैसे (उपमान वाक्य)
तेज निधान लखन पुनि तैसे (उपमेय वाक्य)

२ पिशुन बचन सज्जन चितै, सकै फोरि ना फारि ।
कहा करै लगि तोय में, तुपक तीर तरवारि ॥

'सकै फोरि ना फार' और 'कहा करै' इन भिन्न पदों का अशक्तता रूप एक समान ही धर्म कथन किया गया ।

३ बुध जनहीं जानै भले, बुध जन श्रम गंभीर ।
बंध्या क्यों करि, अनुभवै, तन प्रसूत की पीर ॥

४ गुणी जनन के गुणनि को, आपुहि होत विकास ।
कस्तूरी आमोद नहिं, शपथ किये कछु भास ॥

कहीं२ काकु से भी एक समान धर्म कहा जाता है, यथा—

५ सोमैं वरणि सकौं विधि केहीं । डाबर कमठ कि मंदिर लेहीं ॥
६ सो धनु राजकुँअर कर देहीं । बाल मराल कि मंदर लेहीं ॥

सू०—रसगंगाधर के कर्त्ता पंडितराज जगन्नाथ के मत में प्रतिवस्तूपमा और दृष्टांत में थोड़ीही विलक्षणता के कारण अंतर है नहीं तो ये दोनों एकही अलङ्कार के भेद मात्र हैं ।

२० दृष्टांत

(Exemplification)

दृष्टांतहु प्रतिबिंब सम, दुहूं वाक्य सम दीख ।
कृष्ण प्रेम पागे जोग कस, राज्य पाय कस भीख ॥

दृष्टांत=देखा गया है अंत अर्थात् निश्चय जहां, उदाहरण । दृष्टांत में एक से धर्म वालों की साम्यता बताई जाती है इसमें

उपमान उपमेय और साधारण धर्म का बिंब प्रतिबिंब भाव रहता है काव्य प्रकाश में दृष्टांत का लक्षण यों है। दृष्टांतः पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिंबनम्। साहित्य दर्पण में इसका लक्षण यों लिखा है दृष्टांतस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिंबनम्। इसमें दो वाक्य रहते हैं जिस वाक्य का निश्चय कराना हो सो दार्ष्टांत है और जिस वाक्य द्वारा निश्चय कराया जाय सो दृष्टांत है सामान्य का समर्थन सामान्य से और विशेष का विशेष से होता है, यथा—

१ बड़े सनेह लघुन पर करहीं। अग्नि धूम गिरि तृण शिर धरहीं

२ पगीं प्रेम नँदलाल के, हमैं न भावत जोग।
मधुप राज पद पाय के, भीख न मांगत लोग॥

३ सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय।
पवन जगावत आग को, दीपहिं देत बुझाय॥

४ प्रकृति मिले मन मिलत है, अनमिलते न मिलाय।
दूध दही तें जमत है, कांजी तें फट जाय॥

५ करत२ अभ्यास के जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें, सिल पर परत निशान॥

६ निरखि रूप नँदलाल को, दृगन रुचै नहिं आन।
तजि पियूष कोऊ करत, कटु औषधि को पान॥

७ बसै बुराई जासु तन, ताही को सनमान।
भलो२ कहि छोड़िये, खोटे ग्रह जप दान॥

८ जगत जनायो जिहि सकल, सो हरि जान्यो नाहिं।
ज्यों आंखिन सब देखियत, आंखि न देखी जाहिं॥

९ उभय बीच सिय सोहत कैसी। ब्रह्म जीव बिच माया जैसी॥

१० मन मलीन तन सुंदर कैसे । विष रस भरा कनक घट जैसे ॥

११ अनरस हू रस पाइये, रसिक रसीली पास ।
जैसे सांटे की कठिन, गांठौ भरी मिठास ॥

१२ मधुर वचन तें जात मिट, उत्तम जन अभिमान ।
तनक शीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान ॥

१३ रिसकी रसकी रसिक की, तेरी सबै सुहात ।
तातें सीरे नीर तें, जैसे आग सिरात ॥

१४ दोष एक गुण पुंज में, होत निमग्न 'मुरार' ।
जैसे चंद मयूख में, अंक कलंक निहार ॥

किसी२ प्राचीन आचार्य ने उदाहरण नामक एक अलङ्कार अलग माना है परन्तु अन्य प्राचीन तथा अर्वाचीन आचार्यों ने उसे दृष्टांतर्गत ही माना है । लाला भगवानदीनजी ने अपने ग्रंथ अलंकार मंजूषा में इसकी उत्तम और युक्ति संगत विवेचना की है अर्थात् दृष्टांत में ज्यों, जैसे, वाचक नहीं होते, जिनमें ये वाचक हों सो उदाहरण है दृष्टांत में कवि का मुख्य लक्ष्य उपमान वाक्य (उत्तरार्ध भाग) पर होता है और उदाहरणालंकार में कवि का मुख्य लक्ष्य उपमेय वाक्य (पूर्वार्ध भाग) पर होता है बात ठीक मालूम होती है और ध्यान देने योग्य है परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक आचार्योंने यह भेद इसलिये छोड़ दिया कि जहां वाचक स्पष्ट रूप से नहीं आते वहां ऊपर से कहने में आते हैं और कोषकारों ने भी दृष्टांत और उदाहरण को एकही बात मानी है । कवि मुरारीदानजी ने दृष्टांत और उदाहरण दोनों अलंकार अलग अलग माने हैं परंतु वाचक रहते हुए भी उदाहरण नंबर १३ को उन्होंने दृष्टांतालंकार माना है ।

२१ निदर्शना.

(Illustration)

(१) निदर्शना आरोपनो, एक अर्थ दुहुं बंध ।
मीठे बचन उदार के, सोने माहिं सुगंध ॥

निदर्शना=रच दिखाना । जहां दो वाक्यों के अर्थ में समता भावसूचक ऐसा आरोप किया जाय कि दोनों एक से जान पड़ें चाहे वे असंभव न क्यों हों सो निदर्शना अलंकार है इसमें एक वाक्य दूसरे के अपेक्षित रहता है इसके वाचक जो, से, जे, ते, कहीं स्पष्ट रूप से रहते हैं और कहीं ऊपर से लगाने में आते हैं, यथा—

१ जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन करतार ।
संत हंस गुण गहहिं पय, परि हरि वारि विकार ॥
२ सुन खगेश हरि भक्ति बिहाई । जो सुख चाहे आन उपाई ॥
सो शठ महा सिंधु बिन तरनी । पैर पार चाहत जड़ करनी ॥
३ दाता माहीं सौम्यता, पूर्ण इंदु निकलंक ।
४ जंग जीत जे चहतु हैं, तोसों बैर बढ़ाय ।
जीबे की इच्छा करत, काल कूट ते खाय ॥
५ कित अबला हम अलप मति, कित यह जोग असाध ।
क्यों कर करै पिपीलिका, अचल उचावन साध ॥

(२) और ठौर के धर्म को, और ठौर आरोप ।
विद्रुम की यह धरत है, अधर ललाई ओप ॥ यथा-

१ नैन जुगुल तुव धरत हैं, द्वै नीलाम्बुज ओप ।
२ अस कहि पुनि चितये तिहि ओरा ।
सिय मुख शशि भे नयन चकोरा ॥

(३) आप अवस्था तें जहां, औरन को उपदेस ।
धन्यो ताहि नहिं छांड़िये, कहत धरणि धर सेस ।

यथा—

संग लाय करिणी करि लेहीं । मानहुं मोहि सिखापन देहीं ॥

(यहां मानहुं शब्द उत्प्रेक्षा वाची नहीं केवल शिक्षा का आरोपक है) इस तृतीय भेद में जहां सत अर्थ कथन किया जाय वह सदर्थ निदर्शना और जहां असत अर्थ कहा जाय वहां असदर्थ निदर्शना जानो, यथा—

(सदर्थ निदर्शना)

१ धन्यो ताहि नहिं छांड़िये, कहत धरणि धर सेस ।
२ भानु उदय निज होतही, कमलहिं अर्पत श्रीय ।
संपति को फल अनुग्रह, सुहृदन पर कमनीय ॥
३ पद कर हिय मुख चख समताई ।
पाय कमल अहमिति नहि लाई ॥
कीच बीच बसि अस सिखलावै ।
नमि जो चले ऊंच पद पावै ॥

(असदर्थ निदर्शना)

१ राज विरोधी नसत हैं, यो जग को दरसात ।
चंद्र उदय तें तम निकर, छिन छिन छीजत जात ।
२ संतापित करि दीन, लहत सतत को संपदा ।
अस्ताचल निसि लीन, भानु तपत दिन में जऊ ॥
३ भोग विलासहि में सदा, जन्म गमायो हाय ।
चिंतामणि को कांच के, मोलहिं दियो बहाय ॥

४ घट घट में हरि राजहीं, खोजत अनत वृथाहिं ।
चिंतामणि गर में बँधी, अज्ञ ढूंढ़ भू माहिं ॥

सू०—दृष्टांत में दोनों वाक्य बिंब प्रतिबिंब भाव से स्वतंत्र रहते हैं और लोक प्रसिद्ध वाक्य से समता दी जाती है, निदर्शना में एक वाक्य दूसरे के आश्रित रहता है ।

२२ व्यतिरेक

(Contrast)

व्यतिरेक जहँ उपमेय में, कोई बात विशेष ।
मुख है अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष ॥

व्यतिरेक=विशेष भिन्नता, सिवाय ।

१ ब्रह्म राम तें नाम बड़, वरदायक बरदानि ।
राम चरित शत कोटि महँ, लिय महेश जिय जानि ।

२ नव विधु विमल तात यश तोरा । रघुवर किंकर कुमुद चकोरा
उदित सदा अथवै कबहूं ना । घटहि न जग नभ दिनदिन दूना

३ कहत सबै बेंदी दिये, अंक दशो गुण होत ।
तिय लिलार बेंदी दिये, अगणित बढ़त उदोत ।

४ संत हृदय नवनीत समाना । कहा कविन पर कहै न जाना ॥
निज परिताप द्रवहिं नवनीता । परदुख द्रवहिं सुसंत पुनीता ॥

५ को बड़ छोट कहत अपराधू । सुनि गुण भेद समुझिहैं साधू ॥

६ कलि कर एक पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होय नहिं पापा ॥

७ एक छत्र इक मुकुट मणि, सब वर्णन पर जोय ।
तुलसी रघुवर नाम के, बरण विराजत दोय ॥

२३ सहोक्ति

(Connected Description)

होत सहोक्ति जु साथही, बरणन सुनत सुहाय ।
कीरति अरिकुल संगही, जलनिधि पहुंची जाय ॥

सह=साथ, यथा—

१ बल प्रताप वीरता बड़ाई । नाक पिनाकहिं संग सिधाई ॥
२ त्रिभुवन जय समेत बैदेही । बिनहि विचार बरै हठि तेही ॥
सह, संग, सहित, साथ इस अलङ्कार के वाचक हैं ।

२४ विनोक्ति

(Speech of Absence)

(१) विना उक्ति द्वै भांति की, प्रस्तुत कछु विन हीन ।
वदन सून कविता विना, सदन सुवनिताहीन ।यथा

१ विधु वदनी सब भांति सँवारी । सोह न वसन बिना वर नारी॥
२ चंपा तो में तीन गुण, रूप रंग अरु वास ।
अवगुण तो में एक है, भँवर न आवै पास ॥
३ कहै कृपाराम सब सीखबो निकाम एक बोलिबो न सीख्यो
सब सीख्यो गयो धूर में ।

(२) शोभा अधिकी लहत है, प्रस्तुत कछू विनाहिं ।
बलि सब गुण सरसात तू, रंच रुखाई नाहिं ॥यथा—

१ राम कहा सब कौशिक पाहीं । सरल सुभाव छुवा छल नाहीं ॥
२ इहां प्रयोजन गण अगण, और द्विगण को काहि ।
एकै गुण रघुबीर गुण, त्रिगुण जपति हैं जाहि ॥

२५ समासोक्ति

(Model Metaphor or Speech of Brevity)

समासोक्ति प्रस्तुत विषय, अप्रस्तुत फुर होय ।
कुमुदिन हूं प्रफुलित भई, सांझ कलानिधि जोय ॥

समास=संक्षिप्त । इसमें प्रस्तुत के वर्णन में अप्रस्तुत का भान होता है । कवि की इच्छा जिसके कथन करने की हो वही प्रस्तुत समझो जैसे प्रस्तुत कुमुदनी और चंद्र वर्णन में अप्रस्तुत नायिका और नायक का ज्ञान हुआ, यथा—

१ अरुण उदय अवलोकहु ताता । पंकज कोक लोक सुखदाता ॥
२ सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आप ॥

इस अलंकार में अप्रस्तुत का स्पष्ट कथन करना दोष है अप्रस्तुत का केवल भान सा होता है । समासोक्ति अलंकार अप्रस्तुत प्रशंसा के विपरीत है ।

२६ परिकर

(Insinuator)

है परिकर आशय लिये, जहां विशेषण होय ।
हिमकर वदनी नायिका, ताप हरति है जोय ॥

परिकर=साथी, विवेक, अच्छी तरह से अंगों का बांधना । जहां साभिप्राय विशेषण से विशेष्य कथन किया जाय वहां परिकर अलंकार जानो । यहां तापहरण आशय हिमकर विशेषण में है, यथा—

१ कलाधार द्विजराज वर, ताप हरण विख्यात ।
२ रस बरसत घनश्याम तुम, ताप हरत मुद पूरि ॥
३ किय भूषण तिय भूषण तीको ।

२७ परिकरांकुर

(Sprout of Insinuator)

परिकर अंकुर नाम, साभिप्राय विशेष्य जहँ ।
नेक न मानत बाम, सूधेहू पिय के कहे ॥

जहां विशेष्य साभिप्राय हो वहां परिपरांकुर जानो जैसे बाम अर्थात् टेढ़ी ।

१ गुनहु लखन कर हम पर रोषू । (लख न=जो न लखे)*

२ बदन मयंक ताप त्रय मोचन ।

३ सुनहु बिनय मम विटप अशोका ।
सत्य नाम करु हरु मम शोका ॥

४ बाल बेलि सूखी सुखद, इह रूखे रुख घाम ।
फेरि डहडही कीजिये, सरस सींचि घनश्याम ॥

२८ श्लेष

(Paronomasia)

श्लेष अलंकृत अर्थ बहु, एक वाक्य में होत ।
होय न पूरन नेह बिन, ऐसो प्रगट उदोत ॥

श्लेष=अनेकार्थवाची पद । नेह=तेल, प्रेम । यथा—

१ साधु चरित शुभ सरिस कपासू ।
निरस विशद गुण मय फल जासू ॥
गुणमय=गुण से भरा हुआ, सूत से भरा हुआ ।

२ सगुण सभूषण शुभ सरस, सुबरण सुपद सुराग ।
इमि कविता अरु कामिनी, लहै जु सो बड़ भाग ॥

---

* यहां लख न शब्द साभिप्राय मानकर परिकरांकुर अलंकार है जहां यह साभिप्राय न माना जाय तो विषम अलंकार होगा ।

३ चरण धरत चिंता करत, तनिक न भावै सोर।
सुवरण को ढूंढ़त फिरत, कवि कामी अरु चोर ॥
उदाहरण नंबर ३ तुल्ययोगिता भी होने से उभयालंकार है।

२९ अप्रस्तुत प्रशंसा

(Indirect Description)

अप्रस्तुत परशंस जहँ, प्रस्तुत अर्थहिं होय।
राजहंस विन को करै, छीर नीर को दोय ॥

अप्रस्तुत=अनुपस्थित । यहां राजहंस अप्रस्तुत की प्रशंसा में किसी प्रस्तुत अविवेकी का वर्णन है। इसके पांच भेद हैं (यह उदाहरण सारूप्य निबंधना का है)।

१ सारूप्यनिबंधना (रूप मिस रूप का कथन)

कांधे केसर बांधि के, रूप रच्यो मृगराज।
कूकर क्यों करि है कहो, करि कुल कंपन गाज ॥

केसर=खाल यहां समस्वरूप में अप्रस्तुत सिंह की प्रशंसा में किसी पंडित रूप मूर्ख का वा शूररूप कायर का वर्णन है यथा—

१ सुन दशमुख खद्योत प्रकासा। कबहुं कि नलिनी करहिं विकासा।

२ भयो सरितपति सलिलपति, अरु रतनन की खानि।
कहा बड़ाई समुद की, जुपै न पीजत पानि ॥

३ चातक स्वांती बूंद बिन, पियै न रंचक नीर।

४ केतोही भूखो रहै, सिंह चरत नहिं दूब।

५ कै हंसा मोती चुगै, कै भूखो मरि जाय।

२ सामान्य निबंधना (सामान्य मिस विशेष का कथन)

धरैं न मन में सोच जे, बैर प्रबल सों ठानि ।
सोवत आग लगाय के, सदन मांझ पट तानि ॥

यहां सामान्यतः अप्रस्तुत सबल की प्रशंसा द्वारा किसी प्रस्तुत निबल का अनुचित व्यवहार कथन किया गया, यथा—

सीख न मानै गुरुन की, अहितहिं हित मन मानि ।
सो पछितावै तासु फल, ललन भये हित हानि ॥

३ विशेष निबंधना (विशेष मिस सामान्य का कथन)

धरि कुरंग को अंक में, भो मयंक सकलंक ।
भयो मृगाधिप केहरी, मारत ताहि निशंक ॥

यहां विशेष प्रकार से अप्रस्तुत सिंह की प्रशंसा द्वारा प्रस्तुत चंद्र की निंदा की गई, यथा—

धन्य शेष सिर जगतहित, धारत भुवि को भार ।
बुरो बाघ अपराध बिन, मृगहीं डारत मार ॥

४ कारण निबंधना (कारण मिस कार्य्य कथन)

लीनो राधा मुख रचन, विधि ने सार तमाम ।
तिहि मग होय अकाश यह, शशि में दीखत श्याम ॥

यहां कारण बताकर अप्रस्तुत राधाजी के मुख की प्रशंसा द्वारा प्रस्तुत चंद्रमा में दोष कहा गया, यथा—

१ गर्भन के अर्भक दलन, परशु मोर अति घोर ।

२ कोउ कह विधि जब रति मुख कीना ।
सार भाग शशि कर हर लीना ॥
छिद्र सो प्रगट इंदु उर माहीं ।
तिहि मग देखिय नभ पर छाहीं ॥

३ तदपि कठिन दशकंठ सुन, छत्रि जात कर रोष ।

५ कार्य निबंधना (कार्य मिस कारण कथन)

तव पद नख की दुति कछुक, धोय गई जल साथ ।
तिहि कण मिलि दधि मथत में, चंद्र भयो है नाथ ॥

यहां कार्य्य बताकर अप्रस्तुत नखद्युति के धोवन रूप कारण की प्रशंसा द्वारा प्रस्तुत चंद्र की लघुता वर्णन की गई, यथा—

मात पितहिं जनि सोच बस, करसि महीप किशोर ।

सू०—अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार में प्रशंसा शब्द का अर्थ केवल स्तुति ही नहीं बरन वर्णन भी है, इस अलंकार (सारूप्य निबंधना) में कई प्रकार की अन्योक्तियां कही जा सकती हैं जैसे पर्वतोक्ति, भ्रमरोक्ति, हंसोक्ति, शुकोक्ति इत्यादि । अप्रस्तुत प्रशंसा, समासोक्ति के विपरीत है ।

३० प्रस्तुतांकुर

(Sprout of Direct Description)

प्रस्तुत अंकुर है किये, प्रस्तुत में प्रस्ताय ।
कहां गयो अलि केतकी, छांड़ि सुकोमल जाय॥

प्रस्ताय=उपालंभ, उलहना । जाय=चमेली यथा—

१ भल न कीन्ह तैं निशिचर नाहा। अब मुहिं आन जगायेउ काहा।
अहह बंधु तैं कीन खुटाई । प्रथम न मोहिं जगायेउ भाई ॥

२ सीत बात आतप सह्यो, राखि तेरियै आस ।
तऊ पपीहा की जलद, तैं न बुझाई प्यास ॥

३ जिन जिन देखे वे कुसुम, गई सुबीत बहार ।
अब अलि रही गुलाब में, अपत कटीली डार ॥

सू०—प्रस्तुतांकुर में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य्य उससे होता है जिसके प्रति बात कही जाय। गूढ़ोक्ति में किसी दूसरें सुनने वाले से होता है ।

३१ पर्य्यायोक्ति

(Periphrasis)

(१) पर्य्यायोक्ती व्यंग सों, बोलै बचन रसाल ।
चतुर वहै जो तुव गरे, बिन गुन डारी माल॥

पर्य्याय+उक्ति=अभीष्ट अर्थ का कथन उसी रूप से न कर दूसरे प्रकार से घुमा फिरा कर करना, यथा—

तिन कहँ नाथ कहत किमि चीन्हें। देखिय रवि कि दीप कर लीन्हें

(२) मिस करि कारज साधिये, दूजो भेद विशाल ।
तुम दोऊ बैठो यहां, जात अन्हावन ताल ॥यथा—

१ लखन हृदय लालसा विसेखी । जाय जनकपुर आइय देखी॥

२ पूस मास सुनि सखिन सन, सांईं चलत सवार ।
लैकर बीन प्रवीन तिय, गायो राग मलार ॥

३ सीता हरण तात जनि, कहेउ पिता सन जाय।
जो मैं राम तो कुल सहित, कहहि दशानन आय॥

३२ व्याज स्तुति

(Artful Praise or Irony)

(१) व्याज स्तुति निंदामिसहिं, स्तुति निंदा होय ।
स्वर्ग चढ़ाये पतित लौं, गंग कहा कहुं तोय ॥

व्याज=बहाना, मिस । इस उदाहरण से उसी की निंदा में उसी की स्तुति हुई, यथा—

राम न सकहिं नाम गुण गाई।

इसके सब मिलकर ६ भेद हैं ।

(२) उसी की स्तुति में उसी की निंदा ।

सेमर तू बड़ भाग है, कहा सराह्यो जाय ।
पंछी कर फल आश तुहिं, निशि दिन सेवहिं आय॥

१ अहो मुनीश महा भट मानी ।

२ नाक कान बिन भगनि निहारी।छमा कीन तुम धर्म विचारी ॥
लाजवंत तव सहज सुभाऊ। निज गुण निज मुख कहसि न काऊ ॥

३ जननी तू जननी भई, बिधि सन कहा बसाय ।

(३) और की निंदा से और की निंदा ।

व्याज निंद निंदा मिसै, निंदा हो भरपूर ।
क्रूर जो ऐसे क्रूर को, नाम धर्‍यो अक्रूर ॥ यथा—

बिधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुण खानी ॥

(४) और की स्तुति से और की स्तुति ।

१ कानन तप अकलंक, कहौ कीर कीन्हो कहा ।
लेत जु स्वाद निशंक, अधर सधर से बिंब को॥

२ जासु दूत बल बरणिन जाई। तिहिं आये पुर कवन भलाई ॥

(५) और की निंदा से और की स्तुति ।

१ हर से नग्नहि भजहु हरि, कहा लाभ जिय जानि ।
२ एक कहत मुहिं सकुच अति, रहा बाल की कांख ॥
तिन महँ रावण कवन तैं, सत्य कहहु तजि माख ॥

यहां रावण की निंदा से बाल की स्तुति है ।

(६) और की स्तुति से और की निंदा ।

प्रभु प्रताप रवि उदय लखि, नृप शशि ज्योति मलीन ।

३३ आक्षेप

(Hint)

(१) तीन भांति आक्षेप है, इक प्रतिषेध विचार ।
चंद्र दरश दे वा अहै, तिय मुख प्रभा पसार ॥

आक्षेप=दूषण लगाना यथा—

१ प्रभु प्रसन्न ह्वै दीजिये, स्वर्ग धाम को वास ।
अथवा यातें फल कहा, करहु आपनो दास ॥
२ सानुज पठइय मोहिं बन, कीजिय सबहिं सनाथ ।
नतरु फेरिये बंधु द्वउ, नाथ चलौं मैं साथ ॥

निषेधाभास

(Seeming Hint)

(२) दुतिय निषेधा भास है, कोउ कवि जन मत लेख ।
हौं नहिं दूती अग्नि तैं, तिय तन ताप विशेख ॥

निषेध+आभास=निषेध सा भासना ।

दूती तो थीही तथापि कहती है कि दूती नहीं हूं बरण नायिका की प्रबल उत्कंठा हूं ।

१ राम करहु सब संयम आजू। जो बिधि कुशल निबाहैं काजू॥
२ मोहि तु जानत है कपि है यह मैं कपि हौं नहिं काल हौं तेरो।

विधि निषेध
(Hint Ambiguous)

(३) दुरै निषेध जु बिधि बचन, भेद तीसरो आहि।
जाहु दई मुहिं जन्म दे, चले देस तुम जाहि॥ यथा-

१ राज देन कहि दीन बन, मुहिं न सोच लव लेश।
तुम बिन भरतहिं, भूपतिहिं, प्रजहिं प्रचंड कलेश॥
२ भरत विनय सादर सुनिय, करिय विचार बहोरि।
करब साधु मत लोक मत, नृपनय निगम निचोरि॥
३ जदपि कवित रस एकौ नाहीं। राम प्रताप प्रगटयहि माहीं॥
४ कवि न होउं नहिं चतुर कहाऊंमति अनुरूप राम गुण गाऊं॥

३४ विरोधाभास
(Contradiction)

वहै विरोधा भास, भासै जहां विरोध सो।
वा मुख चंद्र प्रकास, सुधि आये सुधि जात है॥ यथा—

१ तंत्री नाद कवित्त रस, सरस राग रस रंग।
अन बूड़े बूड़े तिरं, जे बूड़े सब अंग॥
२ धर्म हेतु अवतरेहु गुसाईं। मारेहु मोहिं व्याध की नाईं॥
३ तृण तें कुलिश कुलिश तृण करई।
४ लाल तिहारे रूप की, कहा रीति यह कौन।
जासों लागैं पलक दृग, लागैं पलक पलौन॥
५ वा मुख की मधुराई कहा कहौं, मीठी लगैं अंखियांन लुनाई।

६ भये अलेख सोच बस लेखा (लेखा=देवता)

७। भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता बाम ।
धूरि मेरु सम जनक यम, ताहि व्याल सम दाम ॥
बंदौं मुनि पद कंज, रामायण जिन निर्मयो ।
सखरस कोमल मंजु, दोष रहित दूषण सहित ॥

३५ विभावना

(Peculiar Causation)

(१) विभावना षट हेतु बिन, जहँ बरणत हैं काज ।
बिन जावक दीन्हें चरण, अरुण लखे हैं आज॥

विभावना = गई है भावना जिसमें, जावक = महावर, अरुण=लाल, यथा—

बिनु पद चलै सुनै बिनु काना । कर बिनु कर्म करै विधि नाना ॥
आनन रहित सकल रस भोगी । बिन वाणी वक्ता बड़ जोगी ॥

(२) हेतु अपूरण तें जबै कारज पूरण होय ।
कुसुम बाण कर गहि मदन, सब जग जीत्यो जोय॥

यथा—

काम कुसुम धनु सायक लीन्हें । सकल भुवन अपने वश कीन्हें॥

(३) प्रति बंधक के होत हू, कारज पूरण मान ।
निसि दिन श्रुति संगति तऊ, नैन राग की खान॥

(श्रुति=वेद, कान) यथा—

रखवारे हति विपिन उजारा । देखत तोहि अछत तेहि मारा ॥

(४) जबै अकारण वस्तु तें, कारज परगट होत ।
कोकिल की बानी अबै, बोलत सुन्यो कपोत॥यथा-

१ भयउ तात निशिचर कुल भूषण ।

२ पंकज तें पंकज उपज, सुन्यो न देख्यो नैन ।
तिय मुख पंकज में लखे, द्वै इंदीवर ऐन ॥

(५) काहू कारण तें जबै, कारज होत विरुद्ध ।
करत मोहिं संताप यह, सखी शीत कर शुद्ध॥यथा-

(१) उरग स्वास सम त्रिविध समीरा ।

(२) जेहि तरु रहीं करत सो पीरा ॥

(६) पुनि कछु कारज तें जबै, उपजै कारण रूप ।
नैन मीनतें देखियत, सरिता वहत अनूप ॥ यथा--

१ जगत पिता मैं सुत करि जाना ।

२ शंभु विरंचि विष्णु भगवाना । उपजहिं जासु अंशतें नाना॥

३ तुव कर कल्पहिं तें प्रभू, यश पयोधि उतपन्न ।

३६ विशेषोक्ति

(Peculiar Allegation)

विशेषोक्ति जहँ हेतु सों, कारज उपजै नाहिं ।
नेह घटत नाहिं हिय जऊ, काम दीप चित माहिं॥

विशेष=खास, नेह=प्रेम, तेल, यथा--

१ तमकि ताकि तकि शिव धनु धरहीं ।
उठइ न कोटि भांति बल करहीं ॥

२ कर्णादिक खैंचत थके, खिंच्यो न द्रौपदि चीर ।

३ अतनु कियो हर ने तऊ, काम न शक्ति विहीन ।

४ नीर भरे प्यासे रहैं, निपट अनोखे नैन ।

३७ असंभव

(Improbility)

कहत असंभव ही जहां, होत असंभव काज ।
को जाने थो गोप सुत, गिरि धारैगो आज ॥ यथा-

१ अति सुकुमार युगल ममबारे । निशिचर सुभट महा बलभारे ॥
२ ऊधो हम नहिं जानतीं, मन मोहन कूबरि हाथ बिकै हैं ।

३८ असंगति

(Dis-Connection)

(१) होत असंगति हेतु अरु, कारज औरहिं ठौर ।
कोयल मद माती भई, झूमत अम्वा मौर ॥

कोयल तो मद से मत्त हुई उसे झूमना था सो वह तो न झूमी आम के मौर झूमे, यथा—

१ जिन बीथिन बिहरैं सब भाई । थकित होहिं सब लोग लुगाई ॥
२ और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग ।
३ सीता रावण ने हरी, बाँधो गयो समुद्र ।
४ बैल न कूदा कूदी गौन ।

(२) और ठौरही होत जहँ, और ठौर को काम ।
तिलक लगायो हाथ में, तुव बैरिन की बाम ॥ यथा-

१ जो जो भावै सोइ सोइ लेहीं । मणि मुख मेलि डारि कपि देहीं ॥
२ ते पितु मात सखी कहु कैसे । जिन पठये बन बालक ऐसे ॥

(३) औरै काज अरंभिये, औरै करिये दौर ।
मोह मिटायो नाहिं प्रभु, मोह लगायो और ॥ यथा-

१ मोह मिटावन हेतु प्रभु, तुम लीनो अवतार।
उलटो मोहन रूप धरि, मोहीं सब ब्रजनार॥

२ राज देन कहि शुभ दिन साजा। कहेउ जाउ बन केहि अपराधा।

३९ विषम
(Incongruity)

(१) विषम अलंकृत तीन विधि, अन मिलते जु मिलाय।
कहँ कोमल तन तीय को, कहां काम की लाय॥

लाय=अग्नि, यथा—

१ कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा।
२ कठिन भूमि कोमल पद गामी।
३ जिहि बिधि तुमहिं रूप अस दीना। तिहि जड़ बर बाउर कस कीना॥
४ राम सुकीरति भणित भदेसा। अस मंजस अस मोहिं अँदेसा॥
५ कहँ रघुबर के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा॥

(२) कारण को कछु और रँग, कारज को कछु और।
लता श्याम असितें प्रगट, कीर्ति सेत चहुं ठौर॥

असि=तलवार, यथा—

१ श्याम सुरभि पय विशद अति, गुनद करहिं तें पान।
२ या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोय॥
ज्यों ज्यों बूड़ै श्याम रँग, त्यों त्यों उज्ज्वल होय॥

(३) और भलो उद्यम किये, होत बुरो फल आय।
सखि लायो घनसार पै, अधिक रहो तन ताय॥ यथा

१ भले कहत दुख रौरेहु लागा ।

२ मूषक घुस्यो अहार हित, सर्प पिटारी जाय ।
मिल्यो अहार न तिहि कछू, सर्प गयो तिहि खाय ॥

३ सुनहु लखन कर हम पर रोषू । कतहुं सुधाइउ तें बड़ दोषू ॥

४ करत नीक फल अनइस पावा ।

प्राचीनों ने विषम के ३ ही भेद माने हैं परन्तु एक चौथा भेद भी प्रतीत होता है :—

(४) और बुरो उद्यम किये, भलो होय तत्काल ।
विष देते विषया दई, ऐसे दीन दयाल ॥

विषया=एक राजकन्या का नाम, यथा—
कालकूट फल दीन अमीके ।

४० सम
(Equal)

(१) सम भूषण है तीन विधि, यथायोग्य को संग ।
हार कठिन तिय उर बस्यो, जोय कठिन स्वइ अंग ।

इस अलंकार को विषम का ठीक विरोधी समझो, यथा—

१ जस दूलह तस बनी बराता ।

२ चिरजीवौ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गँभीर ।
को घटि ये बृषभानुजा, वे हलधर के बीर ॥

बृषभानुजा=बृषभान की कन्या, बृषभ+अनुजा=बैल की बहिन अर्थात् गाय, हलधर के बीर=बलदाऊ के भाई, हलधर के बीर=हल धारण करनेवाले बैल के भाई=बैल

३ आखर मधुर मनोहर दोऊ ।

(२) कारणही के अंग सब, कारज माहीं चाहि ।
नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि।यथा

१ जो कुछ कहिय थोर सखि सोई। राम बंधु अस काहे न होई ॥
२ सीय दुसह दुख सहि लियो, सुता भूमि की होय ।

(३) बिना विघ्नही काज जहँ, उद्यम करते होइ ।
जाहि ढूंढ़ने मैं चल्यो, बीचहिं मिलिगो सोइ॥यथा-

१ दुंदुभि अस्थि ताल दिखराये । बिन प्रयास रघुनाथ ढहाये॥
२ छुवतहिं टूट पिनाक पुराना ।
३ जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥
४ भाव कुभाव अनख आलस हूं। राम जपत मंगल दिसि दसहूं॥

सू०—जिन पदों में एक से दूसरे की बराबरी, मित्रता, ईर्षा, होड़ इत्यादिक भाव प्रदर्शित हों सो समालंकार के ही अंतर्गत है परन्तु कोई२ इसको ललितोपमा तथा लक्ष्योपमा नाम से पृथक अलंकार मानते हैं, यथा—

उत श्याम घटा इत हैं अलकैं बक पांति उतै इत मोति लरी है ।
उत दामिनि दंत चमंक इतै उत चाप इतै भ्रुव बंक धरी है ।
उत चातक तो पिउ पीउ रटै बिसरै न इतै पिउ एक घरी है ।
उत बूंद अखंड इतै अँसुआ बरसा बिरहीन तें होड़ परी है ॥

४१ विचित्र

(Strange).

है विचित्र उलटो जतन, इच्छा फल के हेत ।
नमत उच्चता लहन को, जे हैं पुरुष सचेत ॥ यथा—

राम कहेउ रिस तजहु मुनीसा । कर कुठार आगे यह सीसा ॥

सू०—कोई२ इससे मिलता हुआ अनुकूल नामक अलंकार पृथक मानते हैं परन्तु वह विचित्रालंकार के ही अंतर्गत प्रतीत होता है, यथा—

प्रतिकूलहिं अनुकूल, करब सोइ अनुकूल है।
दंड उचित बड़ि भूल, बांधु मोंहि निज भुजनतें ॥ जैसे-
जो बांधेही तोष, तौ बांधौ अपने गुणनि।

४२ अधिक

(Exceeding)

अधिक अधार अधेय तें, वा अधेय अधिकाय।
गोपि हृदय त्रिभुवन पती, कीर्ति न सिंधु समाय॥

आधार=जिसमें कोई वस्तु ठहरे, आधेय=वह वस्तु जो आधार में ठहरे।

(आधार बड़ा आधेय छोटा)

१ गोपि हृदय त्रिभुवन पती।
यहां गोपि हृदय आधार बड़ा ठहरा और त्रिभुवनपति आधेय छोटा ठहरा।

२ व्यापक ब्रह्म निरंजनउ, निर्गुण विगत विनोद।
सो अज प्रेमरु भक्तिबस, कौशल्या की गोद ॥*
यहां कौशल्या की गोद आधार बड़ी ठहरी और ब्रह्म आधेय छोटा ठहरा।

(आधार छोटा आधेय बड़ा)

१ कीर्ति न सिंधु समाय।
यहां सिंधु आधार छोटा ठहरा, कीर्ति आधेय बड़ी ठहरी।

* यह उदाहरण विरोधाभास में भी घटित होता है (उभयालंकार)।

२ बहुत उछाह भवन अति थोरा।

भवन आधार छोटा, उछाह आधेय बड़ा।

३ अधिक सनेह समात न गाता।

गात आधार छोटा, सनेह आधेय बड़ा।

४३ अल्प

(Smallness)

रम्य जहां हो अल्पता, सो अल्पालंकार।

अँगुरी की मुँदरी हुती, भुज में करत बिहार॥ यथा—

१ रोम रोम प्रति राजहीं, कोटि कोटि ब्रह्मंड।

२ गज मुख तंदुल कण गिरत, घटत न नेक अहार।

सो पिपीलिका लै चलत, पालत निज परिवार॥

४४ अन्योन्य

(Reciprocal)

अन्योनहिं उपकार, जहां परस्पर पाइये।

निशिहीं सो शशि सार, शशि सों निशि नीकी लगे॥ यथा

१ मुनि रघुबीर परस्पर नवहीं।

२ मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला।

४५ विशेष

(The Extra-ordinary)

(१) है विशेष त्रय भांति को, अनाधार आधेय।

नभ ऊपर कंचन लता, कुसुम महा छबि देय॥

यहां कंचन लता बिजली वा तारों की पांति और कुसुम चंद्रमा जानो यथा—

गहि गिरि नभ निसि धावत भयऊ।

(२) थोरेही आरंभ तें, फल पावै जहँ भूर ।
कल्पवृक्ष देख्यो सही, देखि तुमहिं सुखमूर ॥

आप सुखमूरि को हमने देखा तो साक्षात् कल्पवृक्ष ही देख लिया अर्थात् थोड़े लाभ को अधिक मान लेना, यथा—

१ कपि तव दरस सकल दुख बीने । मिले आज मुहिं राम सप्रीते ॥
२ आजुकी या छबि देखि भटू अब देखिबे को न रह्यो कछु बाकी ।

(३) वस्तु एक को कीजिये, वर्णन ठौर अनेक ।
अंतर बाहर दिसि विदिसि, व्याप रहो प्रभु एक ॥

यथा—

१ निज प्रभु मय देखहिं जगत, कासन करहिं विरोध ।
२ मो में तो में खड्ग खंभ में, कहां बताऊं दूर ।
३ सीयराम मय सब जग जानी । करौं प्रणाम जोरि जुग पानी ॥

४६ व्याघात
(Frustration)

(१) व्याघात जु कछु और सों, कीजे औरहि कार ।
सुख पावत जासों जगत, तासों मारत मार ॥

व्याघात=विघ्न, धक्का--जिस पदार्थ से जो कार्य होना चाहिये उससे कोई दूसराही कार्य किया जाय जैसे कटाक्षादि से जगत आनंदित होता है उसी से मार (कामदेव) जो है सो मारने का कार्य करता है, यथा—

१ देखहु तात बसंत सुहावा । प्रियाहीन मुहिं डर उपजावा ॥
२ उरग श्वास सम त्रिविध समीरा ।

४८ मालादीपक

(The Serial Illuminator)

माला दीपक पूर्व पद, उत्तर प्रति उपकार ।

रस सों काव्यरु काव्य सों, सोभा बचन अपार॥

दीपक और एकावलि के मेल से यह अलंकार होता है, यथा—

१ जग की रुचि व्रजबास, व्रज की रुचि व्रज चंद हरि ।
हरि रुचि बंसी "दास", बंसी रुचि मन बांधिबो ॥

२ श्री हनुमान हिये रघुनाथ बसैं रघुनाथहिं में सब लोक हैं

४९ सार

(The Climax)

सार होत है अधिक जब, इकतें एक बखान ।

मधु सों मधुरी है सुधा, कविता मधुर महान ॥

इस अलंकार में (उत्कर्ष) अधिक से अधिक वा (अपकर्ष) न्यून से न्यून दोनों का समावेश होता है, यथा—

१ अधम तें अधम अधम अति नारी। तिन महँ मैं मति मंद गँवारी ॥

२ तृणतें लघु है तूल, तूलहुतें लघु माँगनो (? मंगन, भिखारी)

३ गिरि तें बड़ो है सिंधु, सिंधुहू तें नभ पुनि, नभहू तें ब्रह्म ब्रह्महूतें बड़ी आशा है ।

५० यथासंख्य

(Relative order)

यथासंख्य वर्णन विषय, वस्तु अनुक्रम संग ।

कर अरि मित्त विपत्ति को, गंजन रंजन भंग ॥ यथा—

१ बंदौं राम नाम रघुबर को। हेतु कृशानु भानु हिम करको॥
यहां राम शब्द के माहात्म्य वर्णन में रकार अकार और मकार का क्रमपूर्व्वक वर्णन है।

२ अमी हलाहल मद भरे, सेत श्याम रतनार।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जिहि चितवन इक बार॥

जहां क्रम भंग हो वह निकृष्ट यथासंख्य है, यथा—

३ सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बोलहिं भय आस।
राज्य धर्म तन तीन को, होय बेगहीं नास॥

सू०—इसको क्रमालंकार भी कहते हैं।

५१ पर्य्याय

(The Sequence)

(१) पर्य्यायहिं क्रमतें जबै, बहु इक आश्रय पाय।
हुती चपलता चरण में, भई मंदता आय॥

पर्य्याय=सम अर्थ को बोध करानेहारा शब्द। इसमें अनेकों का आश्रय एक स्थल में होता है जैसे—जिस चरण में पहिले चपलता थी वहां अब मंदता आगई, दोनों का आश्रय एक चरणही है, यथा—

१ जनक लहेउ सुख सोच विहाई।

२ हुती देह में लरकई, पुनि तरुणाई जोर।
विरधाई आई अजहुं, भज ले नंदकिशोर॥

(२) फिर क्रमतें जब एकही, बहुथल आश्रय पाय।
तीय वदन दुति कमल तजि, चंदहिं रही बनाय॥

इसमें एकही अनेक स्थलों में आश्रय लेता है, यथा—

१ मणि माणिक मुकता छवि जैसी । अहि गिरि गज शिर सोह न तैसी ॥
नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहैं सकल सोभा अधिकाई ॥
२ सती विधात्री इंदिरा, देखीं अमित अनूप ।
जिहि जिहि वेष अजादि सुर, तिहि तिहि तनु अनुरूप॥
३ नाम अनंत अनंत गुण, अमित कथा विस्तार ।
४ कामरिवारे अहीर येई ब्रज बीच बिराजत कुंजबिहारी ।

५२ परिवृत्ति

(The Return)

परिवृत्ती न्यूनाधिकौ, कछू देत कछु लेत ।
लहत संपदा शंभु की, वेल पत्र इक देत ॥

परिवृत्ति=विनिमय, कुछ लेना कुछ देना, अदल बदल करना

(थोड़ा देकर बहुत लेना)

लहत संपदा शंभु की, बेलपत्र इक देत ।

(बहुत देकर थोड़ा लेना)

तारा बिकल देखि रघुराया । दीन ज्ञान हरि लीनी माया ॥

५३ परिसंख्या

(The Special Mention)

परिसंख्या इक थल बरजि, दूजे थल ठहराय ।
नेह हानि हिय में नहीं, भई दीप में जाय ॥

परिसंख्या=बदले में एक वस्तु को उसी सदृश दूसरे स्थल में ठहराना, यथा—

१ दंड यतिन कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज ।
दंड अपराधियों को होता है वहां न होकर यतियों के हाथ में देखा गया भेद भाव अमित्रों में होता है वहां न होकर नाचने वाले में देखा गया ।

२ केशनही में कुटिलता, संचारिन में शंक ।
लख्यो राम के राज्य में, इक शशि माहिं कलंक ॥

३ पत्राही तिथि पाइये, वा घर के चहुं पास ।
नित प्रति पूनो ही रहत, आनन ओप उजास ॥

४ नृपति राम के राज्य में, है न शूल दुख मूल ।
लखियत चित्रन में लिखो, शंकर के कर शूल ॥

५४ विकल्प

(The Alternative)

है विकल्प कै तौं वहै, कै यह कहै विहाल ।
दूर करेगो विरह दुख, कै गुपाल कै काल ॥

विकल्प=नाना विधि कल्पना । इसमें संधि विग्रह रूप से दो तुल्य विरोधी परिणामों का एक साथही कथन होता है ।

१ जन्म कोटि लगि रगर हमारी । बरौं शंभु नतु रहौं कुमारी ॥
२ की तनु प्राण की केवल प्राना । विधि करतब कछु जाइ न जाना ॥

५५ समुच्चय

(The Conjunction)

(१) होत समुच्चय भाव बहु, उपजैं इक सँग आय ।
तुव अरि भाजत गिरत फिर, भाजत हैं सतराय ॥

समुच्चय=समूह, यथा—

चकित चितय मुँदरी पहिचानी । हर्ष विषाद हृदय अकुलानी ॥

(२) एक काज चाहत कियो, मिलि अनेक इक भाय।
यौवन विद्या रूप धन, मद उपजावत आय॥ यथा—

१ आगम निगम पुराण अनेका। पढ़े सुने कर फल प्रभु एका॥
तव पद पंकज प्रीति निरंतर। भव साधन कर फल यह सुंदर॥

२ ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पियाये बारुणी, कहौ कौन उपचार॥

३ एक मंद मैं मोह बस, कीश हृदय अज्ञान।
पुनि प्रभु मोहिं बिसारेउ, दीनबंधु भगवान॥

सू०—कारकदीपक में क्रम रहता है इसमें क्रम की आवश्यका नहीं।

५६ समाधि

(The Convenience)

सो समाधि कारज सुगम, और हेतु मिलि होत।
उत्कंठा तिय के भई, अथयो दिन उद्योत॥

समाधि=समर्थन, यथा—

१ सकल अमानुष करम तुम्हारे। केवल कुल गुरु कृपा सुधारे॥
२ बचन सुनत कपि मन मुसुकाना। भई सहाय शारद मैं जाना॥

५७ प्रत्यनीक

(The Rivalry)

प्रत्यनीक जहँ प्रबल रिपु, तासु पक्ष सों जंग।
रवि निंदित सहं नाव लखि, जारत दीप पतंग॥

प्रति+अनीक=शत्रु—सूर्य्य के सामने दीपक को कोई नहीं पूछता इसलिये दीपक का शत्रु सूर्य्य हुआ, सूर्य्य का नाम पतंग

है और पतंग कीड़ों को भी कहते हैं सूर्य मे तो वश नहीं चलता अतएव सूर्य का सहनाव जान अर्थात् अपने शत्रु के पक्षवाला जानकर दीपक पतंग को जला देता है, यथा—

१ विष्णु वदन सम विधुहिं निहारी । अजहुं राहु दे पीड़ा भारी ॥

२ रे खल का मारसि कपि भालू । मोहिं विलोक तोर मैं कालू ॥

५८ काव्यार्थापत्ति

(Necessary Conclusion)

काव्यार्थापति यह कियो, तिनको यह का बात ।
मुख जीत्यो वा चंद्र को, कहा कमल की बात ॥

काव्यार्थापत्ति=काव्य में न कहे गये अर्थ का आ पड़ना जैसे यहां यह कहने से कि कमल की बातही क्या है अर्थ यह निकला कि उसका जीतना कुछ भी कठिन नहीं है, यथा—

१ जिहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं । कहहू तूल किहि लेखे माहीं ॥

२ जितिउँ सुरासुर तब भय नाहीं । नर बानर किहि लेखे माहीं ॥

३ सिंह पछाऱ्यो बाहु बल, कहा स्यार की बात ।

५९ काव्यलिंग

(Poetical Reason)

काव्यलिंग जब युक्ति सों, अर्थ समर्थन होय ।
तोको मैं जीत्यो मदन, मो हिय में शिव सोय ॥

लिंग=चिह्न । कामदेव को इस कारण जीत लिया कि मेरे हृदय में कामारि शिव विराजमान हैं, यथा—

१ कनक कनक तें सौगुणी, मादकता अधिकाय ।
यह खाये बौरात है, वा पाये बौराय ॥

(कनक=सुवर्ण, धतूरा)

२ सो नर क्यों दशकंध, बालि बध्यो ज्यहि एक शर।

३ श्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी॥

४ तजि तीरथ हरि राधिका, तन दुति कर अनुराग।
जिहि ब्रज केलि निकुंज मग, पग पग होत प्रयाग॥

५ मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जातन की झाईं परे, श्याम हरित दुति होय॥

काव्यलिंग में जो शब्द वा भाव जिस योग्य हो उसी का युक्ति अर्थात् हेतुपूर्व्वक समर्थन करना है।

६ धर्महीन प्रभु पद विमुख, काल विवश दशशीश।
आये गुण तजि रावणहिं, सुनहु कौशलाधीश॥

६० अर्थांतरन्यास

(The Transition)

है अर्थांतरन्यास, जहँ विशेष सामान्य दृढ़।
नृप कर पान पलास, पहुंचत है संग पानके॥

अर्थ=मतलब, अंतर=दूसरा, न्यास=रखना। इसमें सामान्य कथन विषेश कथन द्वारा तथा विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा उदाहरणवत् पुष्ट होता है अर्थात् एक वाक्य का समर्थन दूसरे वाक्य से होता है।

(सामान्य कथन विशेष कथन द्वारा पुष्ट)

१ नृप कर पात पलास (सामान्य कथन)
पहुंचत है सँग पान के (विशेष कथन)

२ बड़े न हूजे गुणन बिन, बिरद बड़ाई पाय (सामान्य कथन)
कनक धतूरे सों कहैं, गहनो गढ़ो न जाय (विशेष कथन)

३ राम एक तापस तिय तारी (सामान्य कथन)
नाम कोटि खल कुमति सुधारी (विशेष कथन)
४ राम भजन बिनु मिटहिं न कामा (सामान्य कथन)
थल विहीन तरु कबहुं कि जामा (विशेष कथन)

(विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा पुष्ट)

१ हरि प्रताप गोकुल बच्यो (विशेष कथन)
कानहिं करहिं महान (सामान्य कथन)
२ परशुराम पितु आज्ञा राखी (विशेष कथन)
मारी मातु लोक सब साखी (सामान्य कथन)

सू०—इस अलंकार में वाचक नहीं होता ।

६१ विकस्वर
(The Expansion)

विकस्वर होत विशेष जब, फिर सामान्य विशेष ।
हरि गिरि धार्‍यो सत पुरुष, भार सहैं ज्यों शेष ॥

विकस्वर=विस्तृत कथन, यथा—

हरि गिरि धार्‍यो (विशेष) सत्पुरुष भार सहैं (सामान्य) ज्यों शेष (विशेष) यथा—

सुमिरि पवन सुत पावन नामू । अपने वस करि राखेउ रामू ॥

६२ प्रौढ़ोक्ति
(The Bold Speech)

प्रौढ़ोक्ती उत्कर्ष को. करै अहेतहिं हेत ।
जमुना तीर तमाल से, तेरे वाल असेत ॥

प्रौढ़=दृढ़, उक्ति=कथन, उत्कर्ष=बड़ाई-यहां जमुना तीरही के तमाल अधिक श्यामता के कारण नहीं, क्योंकि तमाल कहीं के हों सब एकसे ही काले होते हैं अतएव प्रौढ़ोक्ति, यथा—

काम कलभ कर भुजबल सींवां ।

६३ संभावना

(The Supposition)

संभावना विचार, यो होवै तो होय यों ।
लहतो गुणनि अपार, वक्ता होतो शेष जो ॥ यथा—

१ जो तुम अवत्यो मुनि की नाईं । तौ पद रज शिर धरत गुसाईं ॥

२ यह विधि उपजै लच्छि जब, सुंदरता सुख मूल ।
तदपि सकोच समेत कवि, कहैं सीय सम तूल ॥

६४ मिथ्याध्यवसिति

(The False Determination)

मिथ्याध्यवसिति झूंठ हित, कहै जु झूंठी रीति ।
धरै जु माला नभ कुसुम, करै सु पुरतिय प्रीति ॥

मिथ्या=झूठ, अध्यवसिति=यह ऐसा ही है ऐसा ठान लेना, यथा—

१ कमठ पीठ जामंहिं बहु बारा । बंध्यासुत बरु काहू मारा ॥

२ वारि मथे घृत होय बरु, सिकतातें बरु तेल ।

६५ ललित

(Artful Indication)

ललित कह्यो कछु चाहिये, ताही को प्रतिबिंब ।
सेतु बांधि करिहौ कहा, गयो उतरि अब अंब ॥

केवल प्रतिबिंब वाक्य कह करही अभिप्राय सूचित करना, यथा—

१ सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूत कराल ।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥

अमृत केवल सुनने में आता है विष साक्षात देखा जाता है अर्थात् राम राज्य केवल सुनने में आया देखने में नहीं ।

२ लिखत सुधाकर लिखिगा राहू । विधि गति वाम सदा सब काहू ॥

अभिप्राय यह है कि रामजी का राज्याभिषेक तो न हुआ उलटा बनवास होगया ।

३ यह पापिनिहिं सूझ का परेऊ । छाय भवन पर पावक धरेऊ ॥

६६ प्रहर्षण

(Enrapture)

(१) तीन प्रहर्षण जतन बिन, बांछित फल जो होय ।
जाको चित चाहत हुतो, आईदूती सोय ॥ यथा—

१ चितवत पंथ रहेउँ दिनराती । अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥
नाथ सकल साधन में हीना । कीन्हीं कृपा जानि जन दीना ॥

२ जो इच्छा करिहौ मन माहीं । हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥

३ सुनु सिय सत्य असीस हमारी । पूजिहै मन कामना तुम्हारी ॥
४ सुफल मनोरथ होयँ तुम्हारे । राम लखन सुनि भये सुखारे॥

(२) बांछित हूतें अधिक फल, श्रम बिन लह मनमान।
दीपक को उद्यम कियो, तौलों उदयो भान॥यथा-

१ धरहु धीर हुइहैं सुत चारी । त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ॥
(मांगने गये थे एक मिले चार)
२ सुनत बचन बिसरे सब दूखा । तृषावंत जिमि पाय पियूषा ॥

(३) सोधत जाके जतन को, वस्तु चढ़ै कर आन ।
निधि अंजन की औषधी, सोधत लह्यो निदान॥

ज़मीन में गड़े हुए धन के प्राप्त्यर्थ अंजन की औषधी ढूंढ़तेही ज़मीन का गड़ा हुआ धन मिल गया, यथा—

१ यह बिधि मन विचार कर राजा । आय गये कपि सहित समाजा ॥
२ हरि की सुधि को राधिका, चली अली के भौन ।
हँसत बीचही मिलि गये, बरणि सकै सुख कौन ॥

६७ विषाद
(Despondency)

सो विषाद चित चाहतें, उलटो कछु हो जाय ।
राज्य देन कहि दीन बन, विधि गति जानि न जाय।यथा

१ केशन तुम ऐसी करी, बैरिउ करिहै नाहिं ।
चंद्र वदन मृग लोचनी, बाबा कहि कहि जाहिं ॥

२ लिखत सुधाकर लिखिगा राहू।

यह उदाहरण व्यंग्यार्थ से विषाद है "ललित में प्रतिबिंब भाव तथा वाच्यार्थमे ललितालंकार है (उभयालंकार)

३ उड़िहौं खिलिहैं कमल जब, निशि बीते पर भात।
यों सोचत अलि कोशगत, हरि बिनस्यो जल जात॥

६८ उल्लास

(Abandonment)

गुण औगुण जब और के, और धरै उल्लास।
तिय के तन पानिप बढ़ै, पिय के नैननि प्यास॥

(१) गुण से गुण

१ न्हाय संत पावन करैं, गंग धरै यहि आस।

२ जे हर्षहिं पर संपति देखी।

३ शठ सुधरहिं सतसंगति पाई।

अगर इसके साथ दूसरा पद "पारस परसि कुधातु सुहाई" लगावें तो यह दृष्टालंकार होगा।

४ मज्जन फल देखिय तत्काला। काक होहिं पिक बकहु मराला॥

(२) गुण से दोष

१ तिय के तन पानिप बढ़ै, पिय के नैननि प्यास।

२ जरहिं सदा पर संपति देखी।

(३) दोष से गुण

१ परहित हानि लाभ जिन केरे।

२ खल परिहास होय हित मोरा।

३ सुखी होहिं पर विपति विशेखी।

४ बरु भल बास नरक कर ताता॥

(४) दोष से दोष

१ दुखित होहिं पर विपति विशेखी ।

२ कुटिल कूबरी संगतें, भये त्रिभंगीलाल ।

६९ अनुज्ञा

(Permission)

होत अनुज्ञा चाहतें, दोषहिं गुण ठहराय ।
लगै कलंक निशंक तौ, मिलौ मोहनै जाय ॥

अनुज्ञा=आदेश, हुकुम, इजाज़त, यथा—

रामहिं चितय सुरेश सुजाना । गौतम शाप परम हित माना ॥

७० अवज्ञा

(Disregard)

(१) होत अवज्ञा और के, औरहिं नहिं गुण दोष ।
परम सुधाकर किरण तें, खुलैं न पंकज कोष ॥

अवज्ञा=अनादर, अवहेलना । इसका एक भेद 'तिरस्कार' और है ।

(एक का गुण दूसरा न गहै)

१ कोटा बोरे समुद में, अधिक न जल कछु लेत ।

२ राजत शिव के भाल तऊ, शशि धोयो न कलंक ।

३ ऊसर बरसे तृण नहिं जामा ।

(एक का दोष दूसरा न गहै)

१ चंदन विष लागै नहीं, लपटे रहैं भुजंग ।

२ पत्र न लहै करीर, दोष बसंतहि को कहा ।
चातक मुख नहिं नीर, दोष मेघ को ना कछु ॥

तिरस्कार (The Contempt)

(२) तिरस्कार कछु दोष सों, त्याग वस्तु गुणमान ।
वा सोने को जारिये, जासों टूटे कान ॥ यथा—

१ सो सुख धर्म कर्म जरि जाऊ । जहँ न राम पद पंकज भाऊ ॥
२ कह परगन में जो बने धनी मन में न लागे हरि जन में तो थूक ऐसे धन में ।

७१ लेश

(Suggestion)

लेश दोष में गुण लखै, गुण में दोष अधीर ।
काक कटुक निधरक फिरत, परत पींजरे कीर ॥

(दोष में गुण लखै)

१ काक कटुक निधरक फिरत ।
२ जो नहिं होत मोह अति मोही । मिलितेउँ तात कवन विधि तोही ॥
३ कहा कहौं वाकी दशा, हरि प्राणन के ईस ।
विरह ज्वाल जरिबो लखे, मरिबो भई असीस ॥
४ बालि परमहित जासु प्रसादा । मिल्यो राम तुम शमन विषादा ॥

(गुण में दोष लखै)

१ परत पींजरे कीर (मीठी बानी बोलिकै) ।
२ मोहिं दीन सुख सुजस सुराजू । कीन्ह कैकई सब कर काजू ॥

७२ मुद्रा

(The Sealing)

मुद्रा प्रस्तुत पद विषय, औरे अर्थ प्रकास ।
मन मराल नीके धरै, तुव पद मानस आस ॥

मुद्रा=छाप, मोहर। मराल से केवल हंस ही नहीं वरन मराल नामक दोहा भी जिसमें १४ गुरु और २० लघु होते हैं सूचित हुआ, यथा—

१ भीति न गंगा जहँ अनुकूला।

इससे दूसरा अर्थ यह भी है कि जिसमें भगण, तगण, नगण, और दो गुरु हों सो अनुकूला वृत्त है।

२ सहस नाम मुनि भनित सुनि, तुलसी वल्लभ नाम।
सकुचति हिय हँसि निरखि सिय, धरम धुरंधर राम॥
(तुलसी के वल्लभ, वृन्दा के वल्लभ और सीता के वल्लभ)

७३ रत्नावलि
(The Jewelled Necklace)

रत्नावलि प्रस्तुत अरथ, क्रमतें औरहु नाम।
रसिक चतुर्मुख लच्छिपति, सकल ज्ञान के धाम॥

जैसे—हे रसिक आप चतुरन में मुख्य हैं, लक्ष्मीवान हैं और सम्पूर्ण ज्ञान के धाम हैं। अन्यार्थ=आप चतुर्मुख ब्रह्मा हैं, लक्ष्मीपति विष्णु हैं और सकल ज्ञान के धाम शिव हैं ये नाम उत्पत्ति, पालन और लय के क्रम से कहे गये हैं, यथा—

बहुरि बच्छ कहि लाल कहि, रघुपति रघुबर तात।

७४ तद्गुण
(The Borrower)

तद्गुण तजि गुण आपनो, संगति को गुण लेय।
बेसर मोती अधर मिलि, पद्म राग छबि देय॥ यथा—

१ धूमौ तजै सहज करुआई। अगर प्रसंग सुगंध बसाई॥

२ अधर धरत हरि के परत, ओंठ डीठि पट जोति ।
हरित बांस की बांसुरी, इन्द्र धनुष सी होति ॥

३ शठ सुधरहिं सतसंगति पाई ।

यह उदाहरण उल्लास में भी घटित होता है (उभयालंकार)
इस अलंकार में कविजन बहुधा 'गुण' शब्द को रूपरस-गंधादिवाची मानते हैं इसमें नीच गुण वाली वस्तु श्रेष्ठ गुण वाली वस्तु में विलीन हो जाती है ।

७५ पूर्व्वरूप

(The Original)

(१) पूर्व्वरूप लै संग गुण, तजि फिर अपनो लेत ।
सेस श्याम भो शिव गरे, रहे सुजस सों सेत ॥ यथा-

१ खलहु करहिं भल पाय सुसंगू । मिटहिं न मलिन सुभाव अभंगू ॥
२ कर सुवेष जग वंचक जोऊ । वेष प्रताप पूजियत सोऊ ॥
उघरैं अंत न होय निबाहू । काल नेम जिमि रावण राहू ॥

(२) दूजो जब गुण ना मिटै, जतन किये हू खास ।
दीप मिटाये हू कियो, रशनामणि परकास ॥ यथा—

१ विधि बस सुजन कुसंगति परहीं । फणि मणि सम निज गुण अनुसरहीं ॥
२ काम चरित नारद सब भाखे । यद्यपि वरजि प्रथम शिव राखे ॥

७६ अतद्गुण

(The Non-borrower)

अतद्गुण सुसंगति भये, जब गुण लागत नाहिं ।
पिय अनुरागी ना भये, बस रागी मन माहिं ॥

अर्थात् मेरे रागी मन में बसते हुए भी आप अनुरागी न हुए ।

'राग' लाल रंग को भी कहते हैं, यथा—

१ चंदन विष व्यापै नहीं, लपटे रहत भुजंग ।

२ पायस पालिय अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुं कि कागा ॥

३ राखौ मेलि कपूर में, हींग न होत सुगंध ।

इस अलंकार में गुण शब्द रूप रस गंधादिवाची माना जाता है ।

७७ अनुगुण

(The Conformity)

अनुगुण संगति ते जबै, पूरण गुण सरसाय ।
मुक्त माल हिय हास्य तें, अधिक सेत हो जाय ॥

अनु=बढ़ना, दूसरे के संग से अपना पहिले वाला गुण बढ़े, यथा—

१ मज्जन फल देखिय तत्काला । काक होहिं पिक बकहु मराला *

२ मणि माणिक मुक्ता छबि जैसी । अहि गिरिगज सिर सोहन तैसी ॥
नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहहिं सकल सोभा अधिकाई ॥

३ चंपक हरवा अंग मिलि अधिक सोहाय ।

७८ मीलित

(The Lost)

मीलित जो सादृश्य तें, भेद न जबै लखाय ।
अरुण बरण तिय चरण पै, जावक लख्यो न जाय ॥

मीलित=मिला हुआ, यथा—

* यह उदाहरण उल्लास में भी घटित होता है (गुण से गुण) अतएव उभयालंकार ।

१ वेणु हरित मणिमय सब कीन्हें । सरल सपर्ण परहिं नहिं चीन्हें ॥

२ पँखुरी लगी गुलाब की गात न जानी जाय ।

मीलित में नीच गुणवाली वस्तु श्रेष्ठ गुणवाली वस्तु में विलीन हो जाती है ।

७९ सामान्य

(The Sameness)

सामान्य जु सादृश्य तें, जानि परै न विशेष ।
नाहिं फरक श्रुति कमल अरु, तिय लोचन अनिमेष॥

जहां भेद रहते हुए भी सादृश्य से कोई विशेषता न दिखाते हुए जो वाक्य कहा जाय वह सामान्यालंकार है जैसे- अनिमेष (खुले हुए) तिय के नैनों में और कान में खोंसे हुए कमल पुष्प में कोई अंतर नहीं देख पड़ता, यथा—

१ एक रूप तुम भ्राता दोऊ ।

२ भरत राम एकै अनुहारी । सहसा लखि न सकैं नर नारी ॥

३ गिरा अर्थ जल वीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।

८० उन्मीलित

(The Unlost)

उन्मीलित सादृश्य तें, हेतु भेद कछु मानि ।
कीरति आगे तुहिन गिरि, छुए परत है जानि॥

उन्मीलित=खोला हुआ, जमाया हुआ, स्पर्श किया हुआ, जैसे कीर्ति इतनी विस्तीर्ण और स्वच्छ है कि उसमें सफेद हिमाचल भी बिना छुए हुए जान नहीं पड़ता, यथा—

१ बंदौं संत असज्जन चरणा। दुख प्रद उभय बीच कछु बरणा॥

२ सम प्रकाश तम पाख दुहुं, नाम भेद विधि कीन।
शशि पोषक शोषक समुझि, जग जस अपजस दीन॥

३ चंपक हरवा अंग मिलि, अधिक सुहाय।
जानि परै सिय हियरे, जब कुँभिलाय॥

८१ विशेषक

(The Un-sameness)

वहै विशेषक जो फुरै, निश्चय समता मांझ।
जानै तिय मुख अरु कमल, शशि दर्शनतें सांझ॥

विशेषक=विशेष करके जो परीक्षा से पाया जाय, जैसे— तालाब में तैरती हुई नायिका के मुख और कमल में भेद नहीं जान पड़ता संध्या समय चंद्र दर्शन से कमल मुंदने पर जान पड़ता है, यथा—

१ सोइ सर्वज्ञ गुणी सोइ ज्ञाता। राम चरण जाको मन राता॥
२ जानि परत हैं काक पिक, ऋतु बसंत के माहिं॥

उन्मीलित में हेतु की और विशेषक में समय वा अवसर की अपेक्षा है।

८२ गूढ़ोत्तर

(The Secret Reply)

(१) गूढ़ोत्तर कछु भाव तें, उत्तर दीने होत।
हों मैं दशनन मध्य, ज्यों, जीभ बिचारी होत॥

इसमें कहीं प्रश्न पूछने पर उत्तर होता है और कहीं प्रश्न मान लिया जाता है और उत्तर होता है यथा—

१ सुनहु पवनसुत रहनि हमारी । जिमि दशनन महँ जीभ बिचारी
२ कह दशकंठ कवन तैं बंदर । मैं रघुबीर दूत दशकंधर ॥

चित्रोत्तर
(The Skilful Reply)

(२) चित्र प्रश्न उत्तर दुहूं, एकहि पद में होय ।
को है जारत अगिन बिनु, कोरे नेह न होय ॥

प्रश्न—बिना अग्नि कौन जलाता है, उत्तर कोह=क्रोध ।
प्रश्न—स्नेह विहीन पुरुष को क्या कहते हैं, उत्तर=कोरा ।
प्रश्न—का वर्षा जब कृषी सुखाने का=क्या, का=वृथा ।
प्रश्न—तात कहाँतें पाती आई, उत्तर=तात कहाँतें=तात के पास से।

(३) कै अनेकही प्रश्न को, एकहि उत्तर धार ।
वारि बताय विहारि मृग, सर न नवेली नार ॥

प्रश्न—जल बताओ, मृग की शिकार करो, उत्तर सर नहीं ।
पंथी प्यासा जाय, गदहा रह्यो उदास क्यों ।
उत्तर दीन बताय, एक वचन 'लोटा नहीं' ॥

शब्दालंकार में जो प्रहेलिका हैं वे शब्दांतर्गत हैं जो प्रहेलिका अर्थातर्गत हैं वे चित्रोत्तर अलंकार के अन्तर्गत जानना चाहिये, यथा—

१ पानी में निसि दिन रहे, जाके हाड़ न मास ।
काम करै तरवार को, फिर पानी में बास (कुम्हार का डोरा)

२ शीश जटा पोथी गहे, स्वेत बसन तन माहिं ।
जोगी जंगम है नहीं, ब्राह्मण पंडित नाहिं ॥ (लहसन)

३ बांबी वाकी जल भरी, ऊपर बारी आग ।
जबै बजाई बांसुरी निकस्यो कारो नाग ॥ (हुक्का)

४ सिर पर सोहै गंग जल, मुंडमाल गल माहिं ।
बाहन वाको वृषभ है, शिव कहिये की नाहिं ॥　　(रहँट)

८३ सूक्ष्म

(The Subtle)

सूछम पर आशय लखे, करै क्रिया कछु भाय ।
मैं देख्यों उन शीश मणि, केशन लियो छिपाय ॥

सूक्ष्म—इशारा देखकर कुछ क्रिया के इशारे से ही उत्तर देना शीश फूल काले बालों में छिपाने से इशारा निकला कि अभी चांदनी है अँधेरे में मिलेंगे, यथा—

१ सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे ।
बिहंसे करुणा ऐन, चितै जानकी लखन तन ॥
२ सीतहिं सभय देखि रघुराई । कहा अनुज सन सैन बुझाई ॥

८४ पिहित

(The Covering)

पिहित छिपी पर बात को जानि दिखावै भाय ।
प्रातहिं आये सेज पिय, हँसि दाबत तिय पाय ॥

पिहित=आच्छादित, छिपा हुआ व छिपी हुई, यथा—

१ सती कपट जाना सुरस्वामी ।
२ जोरि पाणि प्रभु कीन प्रणामू । पिता समेत लीन्ह निज नामू ॥

८५ व्याजोक्ति

(The Dissembler)

व्याज उक्ति कछु और बिधि, कहै दुरै आकार ।
सखि सुक काटे अधर ये, दंतनि जानि अनार ॥ यथा—

१ नाम प्रताप भानु अवनीसा । तासु दूत मैं सुनहु मुनीसा ॥
२ बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू । भूप किशोर देखि किन लेहू ॥

छेकापह्नुति में निषेध से छिपाना है, व्याजोक्ति में गुप्त भेद प्रगट होजाने पर किसी बहाने से उसको बिना निषेध छिपाना है।

८६ गूढ़ोक्ति

(The Secrecy)

गूढ़ोक्ती मिस और के, करै और सों बात ।
काल सखी मैं जाउँगी, शिव पूजन परभात ॥ यथा—

पुनि आउब यहि बिरियां काली ।
अस कहि मन बिहँसी इक आली ॥

इस अलंकार में कहने वाले का तात्पर्य्य किसी दूसरे सुनने वाले से होता है जिससे बात कही जाती है उससे नहीं प्रस्तुतांकुर में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य्य उससे होता है जिसके प्रति बात कही जाय ।

८७ विवृत्तोक्ति

(Open Speech)

विवृतोक्ति है ऐन, श्लेष छिपो परगट किये ।
कहत जताये सैन, वृष भागौ पर खेत तें ॥

विवृत=उघाड़ा हुआ, उक्ति कथन, जो छिपा आशय था सो सैन शब्द ने खोल दिया, यथा—

१ बेगि विलम्ब न करिय नृप, साजिय सबै समाज ।
सुदिन सुमंगल तबहिं जब, राम होहिं युवराज ॥
२ प्रीति विरोध समान सन, करिय नीति अस आहि ।
जो मृगपति बध मंडुकनि, भल कि कहै कोउ ताहि ॥

८८ युक्ति

(Covert Speech)

युक्ति यहै कीन्हे क्रिया, मर्म छिपायो जाय ।
पीय चलत आंसू चले, पोंछत नैन जँभाय ॥

युक्ति=चतुराई, हिकमत, यथा—

१ बहुरि वदन विधु अंचल ढांकी। पिय तन चितै भौंह करि बांकी॥ खंजन मंजु तिरीछे नयनानि । निज पिय कहेउ तिनहिं सिय सैनानि ।

२ लिखत रही पिय चित्र तहँ, आवत लखि सखि आन ।
चतुर तिया तिहि कर लिखे, फूलन के धनु बान ॥

३ वेद नाम कहि अँगुरिन खंड अकास ।
पठ्यो सूपनखाहिं लखन के पास ॥

वेद=श्रुति, कान । अकास=नाक ।

८९ लोकोक्ति

(Popular Saying)

लोक उक्ति कह नूति जस, तस प्रसंग के ठांव ।
राजा करै सो न्याय है, पांसा परै सो दांव ॥ यथा—

१ चलौ सखी उत जाइये, जहां बसैं व्रजराज ।
गोरस बेचत हरि मिलैं, एक पंथ दो काज ॥

२ कर्म प्रधान विश्व करि राखा । जो जस करै सो तस फल चाखा ।

३ महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम ।
जिहि कर मन रम जाहि सन, ताहि ताहि सन काम ॥

४ देव कहां हम तुमहिं गुसाईं । ईंधन पात कि रात मिताई ॥

५ आरत कहहिं विचारन काऊ। मूझ जुवारिहिं आपन दाऊ॥
६ वृथा मरहु जनि गाल बजाई। मन मोदक नहिं भूख बुताई॥
७ सिय रघुवीर कि कानन योगू। कर्म प्रधान सत्य कह लोगू॥
८ भा विधना प्रतिकूल जबै, तब ऊंट चढ़े पर कूकर काटत।

प्रसंग वर्णन के साथही लोकोक्ति घटित करने से लोकोक्ति अलंकार होता है, केवल लोकोक्ति, अलंकार नहीं।

९० छेकोक्ति

(The Skilful Speech)

छेक उक्ति लोकोक्ति को, साभिप्राय बखान।
चोरी को गुड़ हे सखी, अति मीठो जिय जान॥

छेक=चतुर, उक्ति कथन साभिप्राय=मतलब के साथ, यथा—

१ सत्य सराहि कहेउ वर देना। जानेहु लेइहि मांग चबेना॥
२ खग जाने खगही की भाषा। तातें उमा गुप्त करि राखा॥
३ जानत एक भुजंगही, सखि! भुजंग के खोज॥

९१ वक्रोक्ति

(The Crooked Speech)

वक्र उक्ति स्वर श्लेष सों, अर्थ फेर जब होय।
रसिक अपूरब हो पिया, बुरो कहत नहिं कोय॥

वक्र=टेढ़ा, यथा—

१ मैं सुकुमारि नाथ बन योगू। तुमहिं उचित तप मो कहँ भोगू॥
२ भरत कि राउर पूत न होहीं। आनेहु मोल बिसाहि कि मोहीं॥
३ धर्म शीलता तव जग जागी। पावा दरस हमहुं बड़ भागी॥
४ जानि परी तुमहूं प्रभुजी कलि काल के दानिन की गति लीनी॥

९२ स्वभावोक्ति

(Description of Nature)

(१) स्वभावोक्ति तहँ जानिये, जहँ स्वभाव कहि जाय।
फरकत फांदत फिरत फिर, तुव तुरंग रघुराय ॥

१ भोजन करत चपल चित, इत उत अवसर पाय ।
भागि चलत किलकात मुख, दधि ओदन लपटाय॥ यथा—

२ कहहु स्वभाव न कुलहिं प्रशंसी॥ कालहु डरहिं न रण रघुबंसी॥

३ रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्राण जायँ बरु बचन न जाई॥

४ सत्य कहहु गिरि भव तनु एहा। हठन छूट छूटे बरु देहा ॥

५ सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
यह बानिक मो मन बसौ, सदा बिहारी लाल ॥

(२) उक्ति प्रतिज्ञा बंध जहँ, भेद दूसरो आय ।
अवसि इंद्रजित हतहुँ बरु, शत शंकरहुँ सहाय॥यथा

१ तोरहुँ छत्रक दंड जिमि, तव प्रताप रघुनाथ ।
जो न करहुँ प्रभु पद शपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ ॥

२ शिव संकल्प कीन मन माहीं। यहि तन सती भेंट अब नाहीं ॥

३ जो शत शंकर करैं सहाई। तदपि हतौं रण राम दुहाई ॥

९३ भाविक

(The Vision)

भाविक भूत भविष्य को, परतिछ कहत बखान।
ऐसो भयो न होय गो, जैसो यह बलवान ॥

भाविक=भाव की रक्षा करने वाला, यथा—

१ भयउ न अहइन अब हुनिहारा । भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥ (भूतप्रत्यक्ष)

२ जहँ मुनियन संग वास करि, चरित कीन अभिराम ।
चित्रकूट में जानिये, अबहूं राजत राम ॥ (भूतप्रत्यक्ष)

३ जिन चलाइये चलन की, चरचा श्याम सुजान ।
मैं देखतिं हौं वाहि यह, बात सुनत बिन प्रान॥ (भावीप्रत्यक्ष)

९४ उदात्त

(The Exalted)

है उदात्त महिमा कथन, जहँ उपलच्छित अन्य ।
राधा कृष्ण विहार थल, बंसी बट बट धन्य ॥

उदात्त=श्रेष्ठ, इसमें महिमा और संपत्ति की श्रेष्ठता अन्य को उपलक्षित करके कही जाती है, यथा—

१ जो संपदा नीच गृह सोहा । सो विलोकि सुरनायक मोहा ॥

२ जेहि तिरहुत तिहि समय निहारी । तिहि लघु लाग भुवन दश चारी ॥

३ सो यह वृंदाबन जहां, रच्यो रास नँदलाल ।
मुरली मधुर बजाय के, मोहीं सब व्रजबाल ॥

९५ अत्युक्ति

(Exaggeration)

अति उक्ती अतिशय कथन, दान सुजस बल रूप ।
जाचक तेरे दान तें, भये कल्प तरु भूप ॥

अति+उक्ति=बहुतही बढ़ाकर कहना, मुबालिगा, यथा—

१ सर्वस दान दीन सब काहू । जिन पावा राखा नहिं ताहू ॥

२ देखि दुपहरी जेठ की, छांहहुं चाहत छांह ।

३ जासु त्रास डर कहँ डर होई ।

४ भूषण भार सँभारि है, क्यों वह तन सुकुमार ।
मूधे पांय न धरि सकत, महि शोभा के भार ॥

५ श्याम गौर किमि कहौं बखानी । गिरा अनयन नयन बिनु बानी ॥ *

६ देव देखि तब बालक दोऊ । अब न आंख तर आवत कोऊ*

७ राम न सकहिं नाम गुण गाई ।

९६ निरुक्ति
(Exposition)

निरुक्ति नाम के योग तें, अर्थ प्रकल्पन आन ।
ऊधव कुब्जा बस भये, निर्गुण वहै निदान ॥

निर+उक्ति=बचन को जोड़ देना ।

हे ऊधव जो कुबजा के वश हुए वे निश्चय ही निर्गुण हैं यहां निर्गुण का अर्थ सत रज तम रहित नहीं बरन अज्ञान हुआ, यथा-

१ नाम उदार प्रताप दिनेशा ।
(यहां भानु प्रताप को प्रताप दिनेशा कहा)

२ कनक कलित अहिबेलि बनाई । लखि नहिं परै सपर्न सुहाई
(यहां नागवेलि को आहिबेलि कहा)

३ दोष भरे इमि चरित तुव, तव दोषा कर नाम ।
(दोषा कर दोष का आकर और रात्रि करनेहारा चंद्र (

४ वृथा विरस बातें करति, लेति न हरि को नाम ।
यह न आचरज है कछू, रसना तेरो नाम ॥

५ छीनी छबि मृग मीन की, कहौ कहां की रीति ।
नामहिं में नहिं नीति का, करैं नयन ये नीति ॥

* उभयालंकार देखो काव्यलिंग ।

९७ प्रतिषेध

(Prohibition)

सो प्रतिषेध प्रसिद्ध जो, अर्थ निषेध्यो जाय।
मोहन कर मुरली नहीं, है कछु बड़ी बलाय ॥

प्रतिषेध=रोकना, मना करना, यथा—

१ निपटहिं द्विज करि जानेसि मोही। मैं जस विप्र सुनावौं तोही॥
२ कालनेम सम मैं नहीं, सुनहु वीर हनुमान।
३ सिय कंकण को छोरिबो, धनुष तोरिबो नाहिं।

९८ विधि

(Fitness)

विधि कहियत हैं सिद्धि जब, अर्थ साधिये फेर।
कोकिल है कोकिल जबै, ऋतु में करिहैं टेर ॥ यथा—

१ विश्व भरण पोषण करु जोई। ताकर नाम भरत अस होई॥
२ जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम शत्रुहन वेद प्रकासा॥
३ मुरली मुरली होति है, मोहन के मुख लागि।
४ दीन दयाल हमारो हरो दुख तो गुन दीनदयाल सराहौं।

निरुक्ति में मन माना अर्थ कल्पित किया जाता है विधि में सिद्धार्थही पुनः वही कहा जाता है।

९९ हेतु

(The Cause)

(१) हेतु अलंकृत दोय विधि, कारण कारज संग।
उदित भयो शशि मानिनी, मान मान को भंग ॥

यथा—

१ अरुण उदय अवलोकहु ताता । पंकज कोक लोक सुखदाता१
२ रघुकुल कमल सुजन सुखदाता । आये कुशल देव मुनि त्राता॥
३ राम सरूप निहारतही, उर मोद बढ़्यो मिथिलेश लली के।

(२) कारण कारज ये जबै, लहत एकता पाय ।
मेरे ऋद्धि समृद्धि है, तुव दाया रघुराय ॥ यथा—

१ करि राख्यो निर धार यह, मैं लखि नारी ज्ञान ।
वही वैद्य औषधि वहै, वही जु रोग निदान ॥
२ सिया राम मय सब जग जानी । करौं प्रणाम जोरि जुग पानी२
३ परम पदारथ चारिहूं, श्री राधा गोविंद ।
४ कोऊ कोरिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति यदुपति सदा, विपति विदारनहार ॥

१०० प्रमाण

(The Just)

कहिये बचन प्रमाण जब, वेद शास्त्र युत होय ।
सत्य वचन सब तें भलो, बुरो कहत नहिं कोय ॥

इसके ८ भेद हैं :—

आठ भेद प्रत्यक्ष[1] पुनि, अनुमान[2] उपमान[3] ।
शब्द[4] अर्थापति[5] ऽनुपलबधि[6], संभव[7] ऐतिह्[8] जान॥

१ प्रत्यक्ष

मन अरु इंद्रिय विषय जो, सो प्रत्यक्ष बखान ।
ज्ञान हीन कुलहीन जऊ, पूजत सब धनवान ॥

१ तात जनकतनया यह सोई । धनुष यज्ञ जिहि कारण होई ॥

१ समासोक्ति में भी देखो—उभयालंकार । २ विशेष में भी देखो—उभयालंकार ।

२ अनुमान

कारण लखि अनुमान तें, कारज लीजे जान ।
धुवां देखि सब कोउ करत, आगी को अनुमान ॥

१ नाचि अचानक ही उठे, बिन पावस बन मोर ।
जानति हौं नंदित करी, यह दिशि नंद किशोर ॥
२ जिन लुखरी मारी नहीं, कहा मारिहैं शेर ।

३ उपमान

उपमा की समता लखे, उपमे जानो जाय ।
सागर सो गम्भीर जो, सो समर्थ रघुराय ॥

४ शब्द

शास्त्र लोक को वचन जो, सोई शब्द प्रमान ।
धर्म बिना नाहिं सुखल है, गुरु बिन लहे न ज्ञान ॥

मरै सूम सरदार मरै वह कट्टर टट्टू ।
मरै हठीली नारि मरे वह पुरुष निखट्टू ॥
ब्राह्मण सो मरि जाय हांथ लै मदिरा प्यावै ।
पूत वही मरि जाय जु कुल में दाग लगावै ॥
बे नियाउ राजा मरै नींद धड़ाधड़ सोइये ।
बैताल कहैं विक्रम सुनौ इनके मरे न रोइये ॥

५ अर्थापत्ति

अर्थापति में अर्थ को, जोग व्यर्थ है जौन ।
हर हम बरतीं ना तुम्हें, तौ बरतौ कहु कौन ॥

यह हँसी में पार्वतीजीं का शिव प्रति वचन है ।

६ अनुपलब्धि

जानि परै नहिं वस्तु कछु, अनुपलब्धि सो मान ।
राम तियहुं रावण हरी, है अदृष्ट बलवान ॥

अन=नहीं, उपलब्धि=प्राप्ति ।

७ संभव

जहँ संभव है वस्तु को, संभव सोइ कहाय ।
चार जने मिलि गहि सबै, मेरुहिं देत हिलाय ॥

संभव में किसी वस्तु का हो सकना माना जाता है संभावना में शर्त रहती है कि ऐसा होवे तो ऐसा हो सकता है ।

८ ऐतिह्य

ऐतिह कथा पुराण जो, ताही केर बखान ।
वलि द्वारे ठाढ़े अजहुँ, श्रीहरि ज्यों दरबान ॥

ऐतिह्य=ऐतिहासिक ।

उभयालंकार

भूषण इकतें अधिक जहँ, सो उभयालंकार ।
संसृष्टिरु संकर तहां, उभय भेद निरधार ॥

संसृष्टि

शब्दालंकार+शब्दालंकार

जुदे जुदे भासैं सकल, अपनी अपनी ठाम ।
तिल तंडुल की रीति सों, है संसृष्टि सुनाम ॥ यथा—

करकी करकी बर चुरी, धूर धूसरित देह ।
कत मुरकत परसी परत, सुख सों सनी सनेह ॥

यहां यमक और छेकानुप्रास की संसृष्टि है

अर्थालंकार+अर्थालंकार

शशि सों उज्ज्वल मुख लसै, खंजन हैं मनु नैन ।
अधर नासिका बिम्ब शुक, मधुर सुधा से बैन ॥

उपमा, उत्प्रेक्षा और यथासंख्य अलंकारों की संसृष्टि है ।

शब्दालंकार+अर्थालंकार

दृग से दृग हैं याहि के, मुख सो मुखही आहि ।
कर से कर कटि सी कटी, उपमा उपजै काहि ॥

यहां छेकानुप्रास और अनन्वय की संसृष्टि है ।

संकर

छीर नीर की रीति सों, होंय परस्पर लीन ।
ताको संकर नामही, भाषत परम प्रवीन ॥

इसके चार भेद हैं:—

१ अंगांगिभाव

बीज वृक्ष के न्याय करि, इक को अँग इक होय ।
सो अंगांगी भाव है, कवि गुलाब मति जोय॥यथा—

१ हलत पवन तें तरुन तरु, दीखत छांह अचूक ।
शशि हरि ने तम गज हने, मानहुं तिनके टूक ॥

यहां शशि हरि और तम गज (रूपक) हैं मानहु तिन के टूक (उत्प्रेक्षा) का अंग है ।

२ सघन कुंज घन घन तिमिर, आधि अँधेरी रात ।
तऊ न दुरि है श्याम यह, दीप शिखासी जात ॥

२ समप्राधान्य

दिन दिन पति के न्याय करि, सँग प्रगटे सँग भासु ।
सम प्रधान सो नाम है, कवि गुलाब कहि तासु॥यथा—

१ रघुपति कीरति कामिनी, क्यों कह तुलसीदास ।
सरद प्रकास अकास छबि, चारु चिबुक तिल जास ॥

इसमें क, स, च के अनुप्रास, प्रतीप और रूपक सम-प्रधानता से भासित होते हैं ।

२ सेये सीताराम नहिं, भजे न शंकर गौरि ।
जनम गँवायो बादिही परत पराई पौरि ॥

इसमें स, र, प के अनुप्रास और विषाद एक साथही भासते हैं ।

३ संदेह

रात दिवस के न्याय करि, दोऊ भासैं ठीक ।
सो संकर संदेह है, भेद खुलै नहिं नीक ॥ यथा—

सुनि मृदु बचन मनोहर पिय के । लोचन नलिन भरे जल सिय के॥

यहां लोचन नलिन में उपमा वा रूपक का संदेह है, मीठे बचन सुनकर दुख होना विषम अलंकार है, दुखरूपी कारण से लोचन नलिन भरे जल सिय के अप्रस्तुत प्रशंसा है किसी क बाधक कोई अलंकार नहीं अतएव संदेह रहा ।

४ एकवाचकानुप्रवेश

न्याय नृसिंहाकार करि, एकहिं पद के मांहिं ।
इक वाचक नुपवेश कहि, जुग भूषण दरसाहिं ॥

नृसिंहाकार न्यायवत् एकही वाक्य में दो अलंकार हों, यथा-

हे हरि दीन दयाल हो, मैं मांगौं सिर नाय ।
तुव पद पंकज आसरे, मन मधुकर लगि जाय ॥

यहां पद पंकज में तथा मन मधुकर में शब्दालंकार अनुप्रास और अर्थालंकार रूपक का संकर है।

सू०—कोई२ कवि ७ प्रकार के रसवत् अलंकार और मानते हैं परन्तु वे सब उपरोक्त अलंकार के ही अंतर्गत हैं अतएव नहीं लिखे गये ।

दोष कोष

अलंकारों के मुख्य२ दोष लिखे जाते हैं-यथासंभव उनसे बचना चाहिये ।

(शब्दालंकार के दोष)

१ प्रसिद्धाभाव

अप्रमान कह बात जो, अनुप्रास के हेत ।
दोष प्रसिद्ध अभाव तिहि, भाषैं सुमिति निकेत॥ यथा—

दरि जात दारिद दिनेस तनया के कहे,
कहत कलिंदी के कन्हैया होत देर बिन ॥

२ वैफल्य

चमत्कार तो है नहीं, शब्दाडंबर मात्र ।
सो वैफल्य बखानिये, सुनि राखो सब छात्र॥ यथा—

का बलमा बलमा बलमा, बलमा बलमा बलमा बलमा है ।

३ वृत्तिविरोध

वृत्ति रचैं प्रतिकूल जे, नियमनि को नहिं सोध।
रस में अनरस सम तिही, जानिय वृत्ति विरोध॥ यथा—

उपटीकी टीकी प्रभाटीकी बधुटीकी नाभिटीकी धूर्जटी की औ कुटीकी संपुटीकी है ।

यह शृंगार रस है इसमें कठोर वर्ण नहीं चाहिये उन्हीं का यहां बाहुल्य है ।

४ अप्रयुक्त

यमक होय इक चरण में, दो में वा पुनि चार ।
अप्रयुक्त है तीन में, धरिये ताहि विचार ॥ यथा—

तोपर वारों उर वसी, सुन राधिके सुजान ।
तू मोहन के उर वसी, है उर बसी समान ॥

(अर्थालंकार के दोष)

१ न्यूनता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

चतुर सखिन के मृदु बचन, वासरंजाय बिताय ।
पै निशि में चंडाल लौं मारत यह शशि जाय ॥

यहां चंद्रमा की तुलना चांडाल से दी है यही जातिगत न्यूनता है ।

उपमेय से उपमान की (प्रमाणगत)

सोहत अनल पतंग सम, यह रवि रथ नभ थान ।

यहां रवि रथ की उपमा अग्नि की चिनगारी से है जो अत्यन्त छोटी है—यही प्रमाणगत न्यूनता है ।

उपमेय से उपमान की (धर्मगत)

कृष्ण अजिन पट लसत मुनि, शुचि मौंजीयुत गात ।
नील मेघ के निकट जिमि, नभ दिन मणि विलसात॥

इस दोहे में जिस प्रकार मुनि उपमेय के साथ काली मृगछाला और पवित्र मौंजी का वर्णन किया है उसी प्रकार

सूर्य उपमान के साथ केवल नीलमेघ धर्म का वर्णन किया है मौंजी के समान दूसरा धर्म विद्युल्लता और कहना था सो नहीं कहा अतएव उपमान के धर्म की न्यूनता है ।

२ अधिकता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

कमलासन आसीन यह, चक्रवाक विलसाहि ।
चतुरानन जुग आदि में, प्रजा रचन जिमि आहि ॥

यहां चक्रवाक उपमेय का ब्रह्मारूप उपमान देवजाति के होने से जातिगत अधिकता है ।

उपमेय से उपमान की (प्रमाणगत)

दशनन वाके दिख परत, वज्र शिला अनुहार ।

यहां दांत उपमेय की समता वज्रशिला से की गई यही प्रमाणगत अधिकता है ।

उपमेय से उपमान की (धर्मगत)

लसत पीत पट चाप कर, मनहर बपु घनश्याम ।
तड़ित इंद्र धनु शशि सहित, ज्यों निशि में घनश्याम।

यहां उपमेय श्रीकृष्ण का शंख धारण नहीं कहा गया उपमान नीलमेघ को रात्रि में बिजली इन्द्र धनुष तथा चंद्रमा सहित कथन किया यही धर्मगत अधिकता है ।

३ व ४ उपमेय और उपमान के लिंग और वचन में भेद

कहे जायँ कहु कौन विधि, या नृप के गुन कूल ।
मधुरे वच हैं दाख लों, चरित चांदनी तूल ॥

८ अप्रसिद्ध

काव्य चन्द्र रचना करत, अर्थ किरण जुत चारु ।

काव्य को चन्द्र और अर्थ को किरण कहना अप्रसिद्ध दोष है ।

९ असंभव

धनु मंडल सो परतु है, दीपत शर खर धार ।
जिमि रवि के परवेश तें, परत ज्वलित जल धार ॥

यहां धनुष से छूटे हुए दीप्त वाणों को सूर्य्य मंडल से गिरती हुई ज्वलित जलधाराओं की उपमा दी जाने से असंभव दोष है क्योंकि सूर्य्य मंडल से जलती हुई जलधाराओं का पतन असंभव है ।

न्याय

काव्य शास्त्र के बोध में, परत न्याय को काम ।
सोधि भानु परगट कियो, लोक उक्ति अभिराम ॥

१ अजापुत्र

जोर चले नहिं सबल सों, अबलहिं दीजे त्रास ।
अजापुत्र सो न्याय है, बरणत बुद्धि उजास ॥ यथा—

(१) 'अजा पुत्रं बलिं दद्यात्' । इसे यों पढ़ो अजा पुत्रन् न्याय, ऐसेही लघु व्यंजनांत में सर्वत्र जानो ।

(२) बल सों मन चेती करै, कोउ न आड़त पाय ।
न्याय सबल परतच्छ है, राजा करै सो न्याय ॥
(इसको सबल न्याय भी कहते हैं)

२ अरण्य रोदन

जाकी जबै गुहार, रहत बहुत में अनसुनी ।
हो उद्योग असार, है अरण्य रोदन स्वई ॥ यथा—

को नगारखाने सुने तूती की आवाज़ ।

३ अरुन्धती

सूक्ष्म वस्तु बोधार्थ जहँ, क्रमतें थूल बतात ।
गुरुजन ताही कहत हैं, न्याय अरुन्धति तात ॥ यथा—

ब्रह्म निरूपणार्थ प्रथम द्वैत भाव का दूर करना पश्चात् तत्वों का विचार तदुपरांत जीव प्रकृति आदि के बोध होने के अनन्तर सूक्ष्म ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति कराना ।

४ अंधकवर्तिकीय

अंधक वर्तक वस्तु जहँ, अकस्मात मिलि जाय ।
अंधे हांथ वटेर ज्यों, लागी हिय हरषाय ॥

५ अंधगज

जहँ निज निज अनुमान, वस्तु अदेखी बरणिये ।
बरणत सबै सुजान, अंध गजहि सो न्याय है ॥यथा—

अंधों ने हाथी का जो जो अंग टटोला हाथी का रूप वैसाही बताया ।

६ अंधादर्पण

मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं विरंचि सम ।
बरणत बुद्धि निकेत, अंधा दर्पण न्याय स्वइ ॥

इसी को ऊषरवृष्टि न्याय कहते हैं ।

७ अंध परम्परा

चाल पुरानी पर चलैं, मर्म न जाने कोय ।
सोई अंध परम्परा, भाषत हैं कवि लोय ॥

सू०—यदि मर्म जाने तो अंधपरम्परा नहीं ।

८ कदलीफल

सूधी बातन तें जहां, कारज निकसे नाहि ।
कदली फल सो न्याय है, नीच निसानी आहि ॥

९ काकतालीय

होनी माहीं निमित कछु, अकस्मात लगि जाय ।
न्याय काकतालीय त्यहि, बरणत कवि समुदाय ॥

ताड़ वृक्ष के नीचे से उड़ते हुए कौए पर अकस्मात् ताड़ फल का टूट गिरना और उससे कौए की मृत्यु होना जैसे वह पुरुष मरनेही को था अकस्मात किसी का धक्का लगने से निष्प्राण हो गया ।

१० कूपमण्डूक

घर तजि बाहर की खबर, जाहि न रहत कछूक ।
अल्प ज्ञान के कारणे, न्याय- कूप मण्डूक ॥

११ कूर्म्मांग

जाको जो विस्तार है, ताहीं माहिं समाय ।
नष्ट नहीं अदृष्ट स्वई, कूर्म्मांग है न्याय ॥

१२ कैमुतिक

सिंह हन्यो निज बाहु बल, कहा स्यार की बात ।
जहां होत कह नूति अस, सो कैमुतिक कहात ॥

जाहि सकत हनि स्यार तौ, कहा सिंह की बात ।
जहां होत कहनूति अस, स्वउ कैमुतिक कहात ॥

१३ कौण्डिन्य

नीको है यदि होत यह, औरहु नीको होत ।
सो कौण्डिन्य न्याय है, बरणत सबि कवि गोत ॥

१४ गड्डुरिका प्रवाह

एक चले सब चालि परत, नहिं कछु ठीक ठिकान ।
सो गड्डुरी प्रवाह जिहिं, कहियत भेड़ धसान ॥

१५ गणपति

जहँ थोड़ीसी युक्ति सों, साधत कार्य्य महान ।
सोई गणपति न्याय है, बरणत बुद्धि निदान ॥

जैसे गणपतिजी पृथ्वी में राम नाम लिखकर उसकी प्रदक्षिणा करके प्रथम पूजनीय हुए ।

१६ घटप्रदीप

चहै भलाई आपनी, कबहुं न पर उपकार ।
घट प्रदीप सो न्याय है, बरणत बुद्धि उदार ॥

१७ घुणाक्षर

कछू करत कछु योग सों, चित्र कछू बनि जाय ।
सोई कवि जन के मते, होत घुणाक्षर न्याय ॥

१८ चंद्र चांद्रिका

जाको गुण जब जाहि सों, कबहुं जुदो नहिं होय ।
भली भांति लखि लीजिये, चंद्र चांद्रिका सोय ॥

इसको दिन-दिन पति न्याय भी कहते हैं ।

१९ जल तरंग

जब जाही को रूप कछु, विलग न तासों होय ।
शब्द मात्र की भिन्नता, जल तरंग है सोय ॥

२० जल तुम्बिका

केतौ गोपन कीजिये, तऊ प्रगट हो जाय ।
सोइ न्याय जल तुंबिका, कहत सकल कविराय ॥

२१ तिल तण्डुल

मिले परस्पर हू जहां, वस्तू जुदी लखाय ।
तिल तण्डुल सों न्याय है, बरणत बुद्धि निकाय ॥

२२ दंड चक्र

जहां एक बिन एक को, सरत नाहिं जब काज ।
दंड चक्र है न्याय तहँ, भाषत कवि सिरताज ॥

२३ दंडपूपिका

नष्ट भये अवलंब के, अवलंबित को नास ।
कुत्ता लाठी लै गयो, बँधी पुरी कह आस ॥
(दंड=लाठी, पूपिका=पुरी)

२४ देहलीदीपक

देहरी दीपक न्याय स्वइ, घर बाहिर उजियार ।
राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ॥

२५ नृसिंह

आधो औरहि रूप है, आधो औरहि रूप ।
सो नरसिंह न्याय है, बरणत सब कवि भूप ॥

२६ पिष्टपेषण

सिद्ध वस्तु की सिद्धि को, वृथा जतन जहँ ठान ।
कहत पिष्ट पेषणत्यही, कवि जन बुद्धि निदान ॥

२७ पंग्वन्ध (पंगु अंध)

जहां निबल द्वै करत हैं, इक को एक सहाय ।
बुध जन ताही कहत हैं, अन्धा पंगू न्याय ॥

इसे हृदनक न्याय भी कहते हैं ।

२८ बीजांकुर

दो में पहिलो कौन है, ठीक न जानो जाय ।
इक को कारण एक जहँ, सो बीजांकुर न्याय॥

२९ मण्डूकप्लुति

विषय चलत औरै कछू, औरै कछु बतरात ।
मण्डूकप्लुति न्याय सो, कहत सुमति अवदात ॥

३० यक्ष वृक्ष

देखी है नहिं काहुने, सुनी एक तें एक ।
यक्ष वृक्ष सो न्याय है, भाषत कवि सविवेक ॥

जैसे—भाई इस वृक्ष में एक प्रेत है, प्रश्न क्या तुमने देखा है? उत्तर देखा तो नहीं हमारे काका कहते थे काका से पूछा गया तो उन्होंने कहा हमारे बाबा कहते थे, ऐसेही और भी जानो ।

३१ रात्रिदिवस

जब यह है तौ वह नहीं, जहां होत निरधार।
रात्रि दिवस सो न्याय है, भाषत सुकवि विचार॥

३२ वृद्ध कुमारी वाक्य

जहँ थोरीसी बात में, मांग लेत बहु दान।
वृद्ध कुमारी वाक्य त्यहि, बरणत सबै सुजान॥

एक अंधी तपस्विनी वृद्ध कुमारी पर देव प्रसन्न हुए, कहा, एकही बरदान मांगो वृद्धा ने कहा केवल इतनाही मांगती हूं कि मैं अपने नाती के पंती को सोने के टाठी (थाल) में खाते हुए देखूं।

३३ सुन्दोपसुन्दन

प्रबल रिपुन को परस्पर, होत जहां पर नास।
सुन्द उपसुन्दन न्याय तहँ, बरणत कवि सहुलास॥

३४ सूची कटाह

अल्प अधिक के पूर्वही, जहँ निपटायो जाय।
सूचि कटाह न्याय तहँ, भाषत कवि समुदाय॥

सूची=सुई, कटाह=कढ़ाई, जैसे परीक्षा में रीति है कि पहिले सुलभ प्रश्न निपटाते पश्चात् कठिन में हाथ लगाते हैं।

३५ स्थालीपुलाक

हांडी में को एक कण, लखत होय अनुमान ।
सोई थाल पुलाक है, भाषत सुमति निधान ॥

३६ क्षीर नीर

और वस्तु जब और में, मिलि तन्मय हो जाय ।
पृथक् करण तिन कर सरस, क्षीर नीर है न्याय ॥
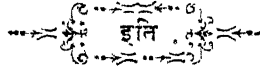
अथ अलङ्कार दर्पण ।

शब्दालङ्कार

गुरु पद पद्महिं नाय सिर, सुमिरि शारदा माय ।
अलंकार दर्पण सजत, 'भानु' भेद विलगाय ॥
लक्षण लक्ष्यहिं कहउँ सब, थोरेही संकेत ।
गद्य पद्य में अति सुगम, शीघ्र बोध के हेत ॥
कहत सुनत समुझत ललित, बुद्धि बढ़ावनहार ।
शोभा कर अति काव्य को, अलंकार सुविचार ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरण सरस सुवित्त ।
भूषण बिन न बिराजई, कविता बनिता मित्त ॥
छेक, वृत्ति श्रुति लाट में, व्यंजन ही को सार ।
अंत्यानुप्रासहिं करिय, स्वर को अंत विचार ॥

विदित हो कि इस अलंकार दर्पण की रचना मैंने हिन्दी काव्यालंकार के पूर्व्वही की थी और इसको अलग प्रकाशित करने का विचार था परन्तु विद्यार्थियों के विशेष लाभार्थ इसे हिंन्दी काव्यालंकार के अंत में ही सम्मिलित कर देना उचित समझा ।

नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
छेकानुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की आवृत्ति एकही बार हो, स्वर मिलैं वा न मिलैं ।	दाख दुखी मिसरी मुरी
वृत्त्यनुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की आवृत्ति कई बार हो, स्वर मिलैं वा न मिलैं ।	धर्म धुरीण धीर नय-नागर ।
श्रुत्यनुप्रास	तालु कंठादि व्यंजनों की समता हो, स्वर मिलैं वा न मिलैं ।	जयति द्वारिका धीश, जय संतन संतापहर ।
लाटानुप्रास	पदावृत्ति में केवल तात्पर्य्य का भेद ।	पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि । पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि ॥
अंत्यानुप्रास	तुकांत ।	हरि भजहु, सब तजहु ।
यमक	वही शब्द फिर हो परन्तु अर्थ दूसरा हो ।	भये विदेह विदेह बिसेखी ।
भाषा समक	मिश्रित भाषा ।	यदा मुश्तरी कर्कटे वा कमाने ।

अर्थालंकार वर्णन के पूर्व्व, उपमाओ के कुछ भेद नीचे लिखते हैं :—

मुख जैसा मुखही है	अनन्वय (२)
मुखसा चंद्र, चंद्रसा मुख	उपमानोपमेय (उपमेयोपमा) (३)
मुखसा चंद्रमा है	प्रतीप (४)
मुखही चंद्रमा है	रूपक (५)
क्या यह मुख है वा चंद्रमा ?	संदेह (१०)
मुख नहीं चंद्रमा है	अपह्नुति (११)
मुख मानो चंद्रमा है	उत्प्रेक्षा (१२)
मुख शोभायमानहै चंद्रभी तो प्रकाशमानहै	प्रतिवस्तूपमा (१६)

अलङ्कार दर्पण (अर्थालङ्कार)

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
१	पूर्णोपमा	उपमान, उपमेय, वाचक. धर्म	शशि सो उज्ज्वल तिय वदन
	लुप्तोपमा	उपरोक्त में एक दो वा तीन कम	विज्जुरीमी पंकजमुखी (धर्म लुप्तोपमा)
	मालोपमा	उपमेय की उपमा कई प्रकार	अलि से मावस रैन से, वाला तेरे वार
	रशनोपमा	उपमेय उपमान होता जाय	कुलसी मति मति सो जु मन, मनहीं सो गुरुदान
२	अनन्वय	जिसकी उपमा उसी से दी जाय	सुंदर नंद किशोर से सुंदर नंद किशोर
३	उपमानोपमेय	परस्पर उपमा	वे तुम सम तुम उन सम स्वामी
४	प्रतीप	उपमेय की समान उपमा कही जाय	मुख सा कमल
५	रूपक	उपमेय ही उपमान हो	मुख कमल
६	परिणाम	उपमान ही उपमेय की क्रिया करै	कर कमलन धनु मायक फेरत
७	उल्लेख	(१) एक को अनेक प्रकार से समझै	याचकों ने कल्पतरु और शत्रुओं ने काल समझा
		(२) एक के गुण नाना प्रकार से कहै	तू रण में अर्जुन के और तेज में सूर्य्य के समान है
८	स्मरण	किसी को देख सुनकर कुछ याद आना	सिय मुख सरिस देखि मुख पावा
९	भ्रांति	भ्रम से कुछ को कुछही समझ लेवे	भ्रम से चकोर ने मुख को चंद्र समझ लिया
१०	संदेह	यह है कि वह निश्चय न हो	ये राम हैं वा लक्ष्मण

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
११	शुद्धापह्नुति	सच्ची बात छिपाई जाय	यह मुख नहीं कमल है
	कैतवापह्नुति	किसी मिस से बात छिपावै	आप के भेजने के मिस से राम ने मुझे बड़ाई दी है
	हेत्वपह्नुति	किसी हेतु से बात छिपावै	यह तीव्र है अतएव चंद्र नहीं, रात्रि है अतएव रवि नहीं
	पर्य्यस्तापह्नुति	एक का धर्म दूसरे में आरोपण करे	यह चंद्र का प्रकाश नहीं मुख चंद्र का प्रकाश है
	भ्रांतापह्नुति	सत्य कहने से पूछनेवाले का भ्रम दूर हो	हे सखी क्या कंप ज्वर का ताप है? नहीं सखी मदन सताता है
	छेकापह्नुति	युक्ति कर दूसरे से बात छिपावै	अर्द्ध निशा वह आयो भौन, सुंदरता बरनै कवि कौन, निरखतही मन भयो अनंद, क्यों सखि सज्जन? नासखि चंद
१२	उत्प्रेक्षा	जो नहीं है उसे मान लेना	श्रवन समीप भये सित केसा, मनहुं जरठ पन अस उपदेसा
१३	अतिशयोक्ति वा रूपकातिशयोक्ति	केवल उपमान ही का कथन हो	कनकलता पर चंद्रमा, धरे धनुष द्वै बान
	सापह्नवातिशयोक्ति	रूपकातिशयोक्ति छिपी हो	अहि शशि मंडल पै लसै, जिय पताल जिन जान
	भेदकातिशयोक्ति	इसकी कुछ बात ही और है	औरै हँसिबो बोलिबो, औरै याकी बात
	संबन्धातिशयोक्ति	अयोग्य को योग्य ठहराना	वा पुर के मंदिर कहैं, शशि लौं ऊंचे लोग
	असंबंधातिशयोक्ति	योग्य को अयोग्य ठहराना	सो न सकहिं कहि कल्प शत, सहस शारदा सेस
	चपलातिशयोक्ति	हेतु सुनतेही कार्य्य हो	विमल कथा कर कीन अरंभा, सुनत नसाय मोह मद दंभा

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
	अत्यंतातिशयोक्ति	हेतु के पूर्व्वही कार्य्य हो	प्रथम उबार्‌यो आय हरि, पुनि टेर्‌यो गजराज
१४	तुल्ययोगिता	(१) वर्ण्य वर्ण्य का वा अवर्ण्य अवर्ण्य का एक धर्म	कमल कोक मधुकर खग नाना, हरषे सकल निसा अवसाना
		(२) शत्रु मित्र पर एक सम व्यवहार	बंदौं संत समान चित, हित अनहित नहि कोय
		(३) अनेकों के गुण गण तुल्य कर एक ही ठौर कहना	प्रभु समर्थ सर्वज्ञ शिव, सकल कला गुणधाम
१५	दीपक	वर्ण्य अवर्ण्य का धर्म. एक साथ	गृह गढ़ गिरि अरु गुणिन को, होय उच्चता मान
१६	कारक दीपक	एक में क्रम से अनेक भाव	लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े
१७	आवृत्ति दीपक	पद की आवृत्ति	हे विधि मिलै कवन विधि बाला
		अर्थ की आवृत्ति	कूकहिं कोकिल गूंजहिं भृंगा
		पद और अर्थ की आवृत्ति	मत्त भये हैं मोर अरु, चातक मत्त सराहि
१८	एकावलि	लिया हुआ पद छोड़ते जाना	दृग श्रुति लौं श्रुति बाहु लौं, बाहु जंघ लौं मान
१९	प्रतिवस्तूपमा	उपमेय और उपमान वाक्यों में एकही धर्म जुदे२ शब्दों में	सोहत भानु प्रताप सो, लसत चाप सो शूर
२०	दृष्टांत	बिंब प्रतिबिंब भाव से दोनों वाक्य सम	उभय बीच सिय सोहत कैसी, ब्रह्म जीव बिच माया जैसी । मत भेद (जहां वाचक हो सो उदाहरण, जहां वाचक न हो सो दृष्टांत)

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
२१	निदर्शना	(१) दोनों वाक्यो में एक अर्थ की आरोपणा	मीठ बचन उदार के सोने माहि सुगंध
		(२) और ठौर के धर्म को और ठौर आरोप	सिय मुख शशि मे नयन चकोर
		(३) अपनी अवस्था से दूसरो को उपदेश	धन्यो ताहि नहिं छाड़िये, कहत धरणिधर शेष
२२	व्यतिरेक	उपमा से उपमेय में कोई बात विशेष	मुख है अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष
२३	सहोक्ति	सह शब्दार्थ युक्त मनोहर युक्ति	नाक पिनाकहि संग सिधाई
२४	विनोक्ति	विन शब्द युक्त मनोहर युक्ति	वदन सून कविता बिना, सदन सुवनिता हीन
२५	समासोक्ति	प्रस्तुत वर्णन से अप्रस्तुत फुर हो	सूर समर करनी करहि, कहि न जनावहि आप
२६	परिकर	विशेषण आशय सहित हो	हिम कर वदनी नायिका, ताप हरति है जोय
२७	परिकरांकुर	विशेष्य आशयसहित हो	वदन मयंक ताप त्रय मोचन
२८	श्लेष	एक वाक्य में अनेक अर्थ	होय न पूरन नेह बिन, ऐसो प्रगट उदोत
२९	अप्रस्तुत प्रशंसा	अप्रस्तुत के वर्णन से प्रस्तुत का गुण प्रगट हो	गज हंस बिन को करै, छीर नीर को दोय
३०	प्रस्तुतांकुर	प्रस्तुत में उपालम्भ	कहा गयो अलि केतकी, छाडि सुकोमल जाय
३१	पर्य्यायोक्ति	(१) व्यंग से रसाल उक्ति	चतुर वहै जो तुव गरे, बिन गुन डारी माल
		(२) मिस करि कार्य्य साधन	लखन हृदय लालसा विसेखी जाय जनकपुर आइय देखी
३२	व्याजस्तुति	किसी बहाने किसी की स्तुति निंदा	स्वर्ग चढ़ाये पतित लौं, गंग कहा कहुं तोय

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
३३	आक्षेप	प्रतिषेध-निषेध	जदपि कवित रस एकौ नाहीं राम प्रताप प्रगट्यहि माहीं
३४	विरोधाभास	विरोध का आभास हो	वा मुख चंद्र प्रकाश, सुधि आये सुधि जात है
३५	विभावना	(१) हेतु विना कार्य्य हो	विन जावक दीने चरण, अरुण लखे है आज
		(२) अपूर्ण हेतु से कार्य्य पूर्ण हो	काम कुसुम धनु सायक लीने, सकल भुवन अपने बस कीने
		(३) प्रतिबंध के होते भी कार्य्य पूरा हो	रखवारे हति विपिन उजारा, देखत तोहि अच्छय पुनि मारा
		(४) अकारण वस्तु से कार्य प्रगट हो	भयउ तात निशिचर कुल भूषण
		(५) कारण से कार्य विरुद्ध हो	उरग स्वास सम त्रिविध समीर
		(६) कार्य से कारण प्रगट हो	जगत पिता मैं सुत करि जाना
३६	विशेषोक्ति	हेतु रहते कार्य्य न हो	नीर भरे प्यासे रहैं, निपट निपट अनोखे नैन
३७	असंभव	असंभव घटना का कथन	को जाने थो गोप सुत, गिरि धारैगो आज
३८	असंगति	(१) हेतु और स्थान में, कार्य्य और स्थान में	जिन वीथिन विहरैं सब भाई, थकित होहिं सब लोग लुगाई
		(२) और ठौर का काम और ठौर हो	ते पितु मात सखी कहु कैसे जिन पठये वन बालक ऐसे
		(३) एक कार्य्य आरंभ कर दूसरा करना	राज देन कहँ शुभ दिन साधा कह्यो जान वन केहि अपराधा
३९	विषम	(१) अनमेल का मेल	कठिन भूमि कोमल पद गामी

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
		(२) कारण का और रंग कार्य्य का और रंग	ज्यों२ बूड़ै श्याम रंग, त्यों२ उज्ज्वल होय
		(३) भला उद्यम करते बुरा फल हो	भले कहत दुख रौरेहु लागा
		(४) बुरा उद्यम करते भला फल हो	कालकूट फल दीन अमी के
४०	सम	(१) यथायोग्य का संग	जस दूलह तस बनी बराता
		(२) कारण के अंग कार्य्य में दिख पड़ें	नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि
		(३) उद्यम करतेही विना विघ्न कार्य्य हो	छुवतहि टूट पिनाक पुराना
४१	विचित्र	इच्छा फलार्थ उलटा प्रयत्न	नमत उच्चता लहन को, जेहैं पुरुष सचेत
४२	अधिक	आधार वा आधेय की कमी बढ़ी	अधिक सनेह समात न गाता
४३	अल्प	अल्पता रमणीय हो	रोम रोम प्रति राजहीं, कोटि२ ब्रह्मन्ड
४४	अन्योन्य	एक से दूसरे का उपकार	निशिहीं सों ससि सार, ससि सो निसि नीकी लगै
४५	विशेष	(१) आधेय अनाधार	नभ ऊपर कंचन लता, कुसुम महा छवि देय
		(२) थोड़े आरंभ से विशेष फल, थोड़े को बहुत मानना	कपि तव दरस सकल दुख बीते
		(३) एक वस्तु का वर्णन अनेक ठौर करना	निज प्रभु मय देखहिं जगत कासन करहिं विरोध
४६	व्याघात	(१) और से और ही कार्य्य हो	बिछुरत एक प्राण हरि लेहीं

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
		(२) विरोधी से अपना कार्य्य साधना	राखिय अवध जु अवधि लग रहत जानिये प्रान
४७	कारणमाला	कारण काज परस्परा	धर्मतें विरति, विरति ते ज्ञाना
४८	मालादीपक	दीपक+एकावलि, उत्तर प्रति उपकार	रस सों काव्य अरु काव्य सों, सोभा वचन अपार
४९	सार	एक से एक बढ़कर	मधु सों मधुरी है सुधा, ताहू सो शुभ काव्य
५०	यथासंख्य	वर्णन में वस्तु अनुक्रम संग	कर अरि मित्त विपत्ति को, गंजन रंजन भंग
५१	पर्य्याय	अनेक एक स्थल पर वा एक अनेक स्थल पर आश्रय लें	हुती चपलता चरण में, भई मंदता आय
५२	परिवृत्ति	लेना देना चमत्कारी हो	लहत संपदा शंभु कीं, बेल पत्र इक देत
५३	परिसंख्या	एक स्थल में बरजि कर दूसरे स्थल में ठहराना	नेह हानि हिय में नहीं, भई दीप में जाय
५४	विकल्प	या तो यह या वह	जन्म कोटि लगि रगर हमारी बरौं शंभु नतु रहौं कुमारी
५५	समुच्चय	(१) एक संग बहु भाव	तुव अरि भाजत गिरत फिर, भाजत हैं ततराय
		(२) अनेक मिलकर एक कार्य्य साधें	यौवन विद्या रूप धन मद उपजावन जाय
५६	समाधि	हेतु के योग से कार्य्य सुगम	सकल अमानुष करन तुम्हारे, केवल कुल गुरु कृपा सुधारे
५७	प्रत्यनीक	प्रवल रिपु के पक्ष वाले से द्वेष	विष्णु वदन सम विधुहि निहारी अजहुं गहुंद पीड़ा भारी
५८	काव्यार्थापत्ति	जब यह किया तो यह कौन बड़ी बात है	जितेउँ सुरासुर तब भय नाहीं, नर वानर किहि लेखे माहीं

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
५९	काव्यलिंग	युक्ति से अर्थ समर्थन	सो नर क्यों दशकंध, बालि बध्यो जिहि एक शर
६०	अर्थांतरन्यास	सामान्य विशेष से वा विशेष सामान्य से दृढ़हो	नृप कर पात पलास, पहुँ-चत है सँग पान के
६१	विकस्वर	विशेष फिर सामान्य फिर विशेष कथन से दृढ़ता	हरि गिरि धार्यो सत पुरुष, भार सहैं ज्यो शेष
६२	प्रौढ़ोक्ति	अहेतु को हेतु मानकर उत्कर्ष कथन	जमुना तीर तमाल से, तेरे बाल असेत
६३	संभावना	यो होवे तो यो होय	लहतो गुणनि अपार, वक्ता हो तो शेष जो
६४	मिथ्याध्य-वसिति	असत्य कथन असत्य रीति से	वारि मथे घृत होय बरु, सिकतातें बरु तेल
६५	ललित	प्रस्तुत का प्रतिबिंब भाव से कथन	सेतु बाधि करिहो कहा, उतरि गयो अब अंबु
६६	प्रहर्षण	(१) यत्न बिना वांछित फल मिले	नाथ सकल साधन मैं हीना, कीनी कृपा जानि जन दीना
		(२) बिना श्रम बांछित से भी अधिक फल प्राप्ति	धरहु धीर ह्वैहैं सुत चारी
		(३) वस्तु के यत्न को शोधतेही वस्तु प्राप्ति	यह विधि मन विचार करि राजा, आय गये कपि सहित समाजा
६७	विषाद	चित चाह से उलटा होना	राज्य देन कहि दीन बन
६८	उल्लास	एक का गुण अवगुण दूसरा धरै	न्हाय संत पावन करै, गंग धरै यह आस
६९	अनुज्ञा	चाह से दोष को गुण ठहराना	गौतम शाप परम हित माना

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
७०	अवज्ञा	(१) एक के गुणदोष को दूसरा न गहै	ऊषर बरसे तृण नहि जामा
		(२) तिरस्कार	सो सुख धर्म कर्म जरि जाऊ, जहँ न राम पद पंकज भाऊ
७१	लेश	दोष में गुण और गुण में दोष लखै	काक कटुक निधरक फिरत, परत पींजरे कीर
७२	मुद्रा	छाप या मोहर के समान दूसरा भी अर्थ हो	भीति न गंगा जहँ अनुकूला
७३	रत्नावलि	प्रस्तुत अर्थ में क्रम से और भी नाम	रसिक चतुर्मुख लच्छिपति, सकल ज्ञान के धाम
७४	तद्गुण	अपना गुण तजि संगति का गुण लेय	बेसर मोती अधर मिलि, पद्म राग छवि देय
७५	पूर्व्वरूप	(१) संग का गुण लेकर छोड़ि और अपना फिर ग्रहण करे	१ शेष श्याम भो शिव गरे, रहे सुजस में सेत
			२ खलहु करहिं भल पाय सुसंगू, मिटहिं न मलिन सुभाव अभंगू
		(२) यत्न करने पर भी गुण न मिटै	काम चरित नारद सब भाखे, यद्यपि बरजि प्रथम शिव राखे
७६	अतद्गुण	संगति से गुण ना लगै	पिय अनुरागी ना भये, बसि रागी मन माहि
७७	अनुगुण	संगति से गुण और बढ़े	मुक्त माल हिय हास्य ते, अधिक सेत हो जाय
७८	मीलित	सादृश्य से भेद न जाना जाय	अरुण बरण तिय चरण पै, जावक लख्यो न जाय

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
७९	सामान्य	भेद रहते हुए भी सादृश्य में विशेषता न जान पड़े	एक रूप तुम भ्राता दोऊ
८०	उन्मीलित	सादृश्य से हेतु भेद	कीरति आगे तुहिन गिरि छुए परत है जान
८१	विशेषक	जो परीक्षा द्वारा सिद्ध हो	जाने तिय मुख अरु कमल शशि दर्शन तें सांझ
८२	गूढ़ोत्तर	(१) कुछ भाव सहित उत्तर देना	कह दशकंठ कवन तैं बंदर, मैं रघुवीर दूत दशकंधर
		(२) चित्रोत्तर-प्रश्नोत्तर एकही पद में	का वर्षा जब कृषी सुखाने
		(३) अनेक प्रश्न का एक ही उत्तर	वारि बनाय विहारि मृग, सरन नवेली नार
		अर्थ प्रहेलिका	बांबी वाकी जल भरी, ऊपर बारी आग। जबै बजाई बांसुरी, निकस्यो कारो नाग
८३	सूक्ष्म	पर आशय देख क्रिया से भाव जतावे	सीतहिं समय देखि रघुराई, कहा अनुज सन सैन बुझाई
८४	पिहित	छिपी बात को भाव से जताना	जोरि पाणि प्रभु कीन प्रणामू, पिता समेत लीन निज नामू
८५	व्याजोक्ति	प्रगट वस्तु का कपट से गोपन करना	सखि शुक काटे अधर ये, दंतनि जानि अनार
८६	गूढ़ोक्ति	और के मिस से और से बात करना	पुनि आउब यहि बिरियां काली, अस कहि मन बिहँसी इक आली
८७	विवृतोक्ति	छिपा श्लेष प्रगट करना	कहत जताये सैन, वृष भागो पर खेत तें
८८	युक्ति	क्रिया द्वारा मर्म छिपाना	पीव चलत आंसू चले, पोंछत नैन जँभाय

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
८९	लोकोक्ति	कहावत को प्रसंग के साथ कहना	कर्म प्रधान विश्व करि राखा जो जस करै सो तस फल चाखा
९०	छेकोक्ति	लोकोक्ति साभिप्राय हो	खग जाने खग ही का भाषा तातें उमा गुप्त करि राखा
९१	वक्रोक्ति	स्वर श्लेष से टेढ़ा अर्थ निकले	भरत कि राउर पूत न होहीं
९२	स्वभावोक्ति	(१) स्वभाव कथन	रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाँय वरु वचन न जाई
		(२) प्रतिज्ञाबद्ध कथन	शिव संकल्प कीन मन माहीं, यहि तन सती भेंट मुहिं नाहीं
९३	भाविक	भूत भविष्य को प्रत्यक्ष-वत् कहना	ऐसो भयो न होयगो, जैसो यह बलवान
९४	उदात्त	अतिशय समृद्धि का वर्णन	राधा कृष्ण विहार थल, वंसीवट बट धन्य
९५	अत्युक्ति	दान सुयश बल रूप का अतिशय कथन	सर्वस दान दीन सब काहू, जिन पावा राखा नहिं ताहू
९६	निरुक्ति	नाम में दूसरे अर्थ की कल्पना	नाम उदार प्रताप दिनेसा
९७	प्रतिषेध	प्रसिद्ध अर्थ का निषेध	मोहन कर मुरली नहीं, है कछु बड़ी बलाय

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
९८	विधि	सिद्ध वस्तु का विधि पूर्व्वक विधान	कोकिल हैं कोकिल जबै, ऋतु में करिहैं टेर
९९	हेतु	(१) कारण कार्य्य संग ही कथन हो	अरुण उदय अवलोकहु नाना, पंकज कोक लोक सुखदाता
		(२) कारण कार्य्य की एकता	कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार, मो सम्पति यदुपति सदा, विपति विदारण हार ॥
१००	प्रमाण	वेद शास्त्र युक्त कथन	सत्य बचन सब तें भलो, बुरो कहत नहि कोय

शुभम्भूयात्